

VOLUME-1
ISSUE-2
DECEMBER-2016

ISSN No.:- 2456-2424

EMERGING RESEARCH JOURNAL

MULTIDISCIPLINARY INTERNATIONAL REFERRED JOURNAL

JABALPUR PUBLIC COLLEGE
RUN BY SHIV NARAYAN FOUNDATION

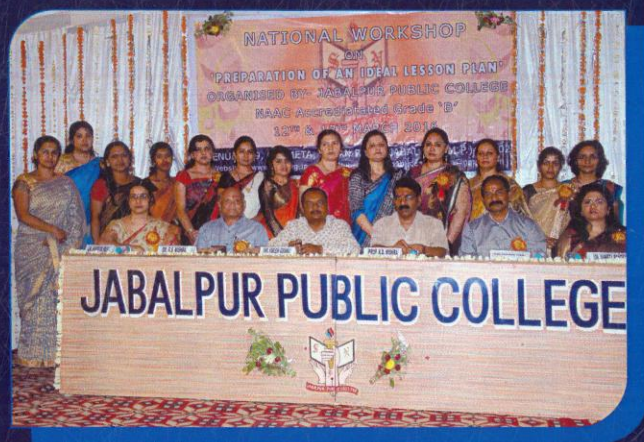
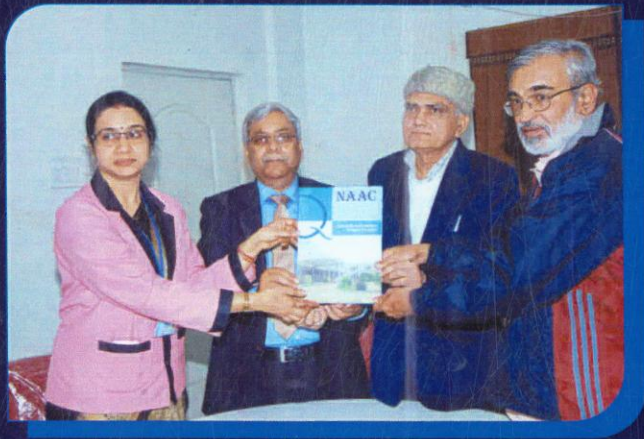
49, KARMETA, PATAN ROAD, JABALPUR (M.P.)

E mail : jabalpurpubliccollegejbp@gmail.com

Website : jpc.org.in



LATE SHRI SHIV NARAYAN VERMA





ISSN No. : 2456-2424

Emerging Research Journal

Vol-1

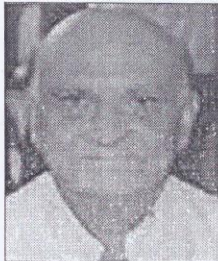
Issue-2

December 2016

A Multi-Disciplinary International Research Journal

Emerging Research Journal is a high quality Journal devoted to the field of science, social science, education, commerce & Management. "Emerging Research Journal" is an official Publication of the national society of Shiv Narayan Foundation. The Journal publishes original records, review articles, short communications, scientific survey, etc. Emerging Research Journal provides a forum for all above disciplines for development and research techniques and produces laboratory investigations. It aims to provide a highly readable and valuable addition to the literature which will serve as an indispensable reference for years to come. The Journal's core aim therefore, is to provide a platform for the researchers, scholars and research findings with the rest of the world there by facilitating informed decision which will improve society as a whole.

Emerging Research Journal : An Introduction



'Emerging Research Journal' is a half yearly international research journal. It is international in the sense that we have two eminent educationists of international reputes as our advisors and writers -1. Dr. Balbir Singh, U.S.A. and 2. Dr. Prem Khartri, Nepal. It is bilingual as we have included in it research papers in English as well as in Hindi.

The next important feature of this international journal is that it is a peer reviewed research journal. We have five reputed and committed peers like 1. Dr. Prem Khatri, Director, Children's Academy, Nepal 2. Father G. Vaghan Arasu. Principal St. Alloysious College, Jabalpur 3. Dr. P.L. Mishra, Rtd Principal Govt. I.A.S.E. Jabalpur, 4. Ex Prof. S.K. Mehta, State Institute of Science Education, Jabalpur and 5. Shri Bhupendra Nigam, Ex Counsellor Govt., College of Psychology & Guidance, Jabalpur.

This international journal is the result of the initiative taken by Shri Praveen Verma, Chairman Jabalpur Public College, Run by Shiv Narayan Foundation, Jabalpur (M.P.). I can not help appreciating Shri Praveen Verma because in spite of not being an academican he has developed a taste for academic activities. The result is the publication of this international research journal.

The main objective publishing this international journal is to increase and inspire the trend of deep study and research in varicus fields of education which may be helpful in the development of knowledge and society. If we are able to achieve this target, even to some extent, we shall be proud of our effort. With this great ambition I am happy to hand over this international research journal in the hands of students, research scholars and teacher educators.

Dr. Gargi Sharan Mishra

PATRONS

Shri Praveen Verma
Director, Jabalpur Public College
Jabalpur, (M.P.)

Dr. Kapil Dev Mishra
Vice Chancellor, RDVV
Jabalpur (M.P.)

Dr. Balbir Singh
USA
bsingh1932@msn.com

Father G.V. Vazhan Arasu
Principal, St. Aloysius College,
Jabalpur (M.P.)

Shri Bhupendra Nigam
Councillor, Govt. College of
Educational Psychology, Jabalpur (M.P.)
9425161398

Prof. S.K. Mehta
03, Shivani Complex, Gupteshwar
Road, Madan Mahal, Jabalpur (M.P.)
0761-2420596

EDITOR IN CHIEF

Dr. G.S. Mishra

EDITOR

Dr. Nivedita Paul

MANAGING EDITORS

Dr. Chitranshi Verma
Smt. Meenakshi Shrivastava

Dr. Shweta Pandey
Dr. P.L. Mishra

ADVISORY BOARD

Dr. K.M. Bhandarkar, Gondia (M.S.)

Dr. Nilima Bhagwati, Assam

Dr. V.K. Gupta, Kurukshetra, (Haryana)

Dr. K.K. Sharma, Kurukshetra, (Haryana)

Dr. V.M. Shashi Kumar,
Thiruvananthapuram, Kerala

Dr. Alka Nayak, Ex. Vice Chancellor
RDVV, Jabalpur (M.P.)

Prof. B.K. Sahoo, Dean Faculty of Education,
RDVV, Jabalpur (M.P.)

Dr. Susamma Johnson,
Jabalpur (M.P.)

Dr. Damodar Jain, Bhopal (M.P.)

Dr. P. Pal Devnasan, Tamilnadu

Dr. Shobhana Khare, Jabalpur (M.P.)

Dr. Sunil Pahwa, Jabalpur (M.P.)

Dr. S.D. Singh, Mathura (U.P.)

Dr. Prem Khatri, Nepal

Dr. Ashutosh Dubey, Jabalpur (M.P.)

Dr. Arun Shukla, Jabalpur (M.P.)

Dr. Bhawana Soneji, Jabalpur (M.P.)

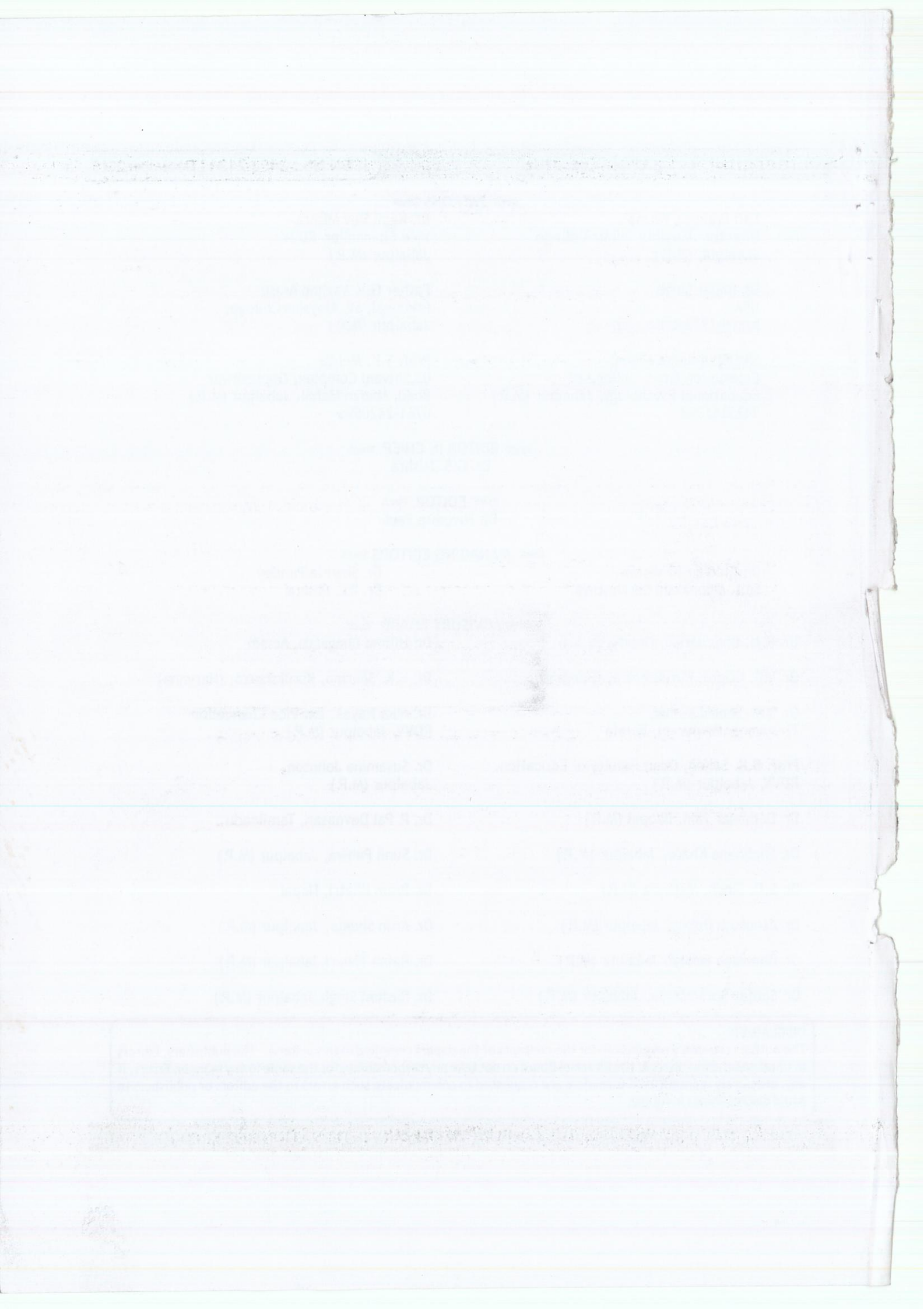
Dr. Raina Tiwari, Jabalpur (M.P.)

Dr. Sanjay Shrivastava, Jabalpur (M.P.)

Dr. Rashmi Singh, Jabalpur (M.P.)

DISCLAIMER

The authors are solely responsible for the contents of the papers compiled in this volume. The publishers, Editors in Chief and the members of the Editorial Board do not take any responsibility for the same in any manner. Errors, if any, are purely unintentional & readers are requested to communicate such errors to the editors or publishers to avoid discrepancies in future.



No.		Page
1.	डॉ. (श्रीमती) अनुपमा ब्यौहार माध्यमिक कक्षा के विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव	1-6
2.	श्रीमती डिम्पल वर्मा किशोर विद्यार्थियों के बुद्धि एवं सृजनात्मक चिंतन के मध्य संबंध का अध्ययन	7-9
3.	श्रीमती जया चतुर्वेदी / डॉ. (श्रीमती) श्वेता पाण्डे उच्चतर माध्यमिक शाला के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन	10-13
4.	श्रीमती किरण मिश्रा / श्री भूपेन्द्र निगम एन.सी.एफ.टी.ई. 2009 द्वारा प्रस्तुत पाठ्यक्रम को स्थानीय भाषा एवं परिवेश से जोड़ने पर विद्यार्थियों पर प्रभाव	14-17
5.	कृ. राबिया बेगम / डॉ. (श्रीमती) ममता शर्मा पुनर्वास केन्द्र में भर्ती कुपोषित बच्चों का स्वास्थ्य परीक्षण एवं उन पर आहारिय प्रबंधन का प्रभाव	18-21
6.	श्रीमती रश्मि श्रीवास्तव / डॉ. सी.भसीन क्रिया-कलाप आधारित अधिगम (ए.बी.एल.) का विद्यार्थियों की शैक्षणिक चिन्ता पर प्रभाव	22-24
7.	डॉ. रीना जैन बालिका शिक्षा की प्रगति के लिये बालिका छात्रावास योजना के अंतर्गत बालिकाओं की विद्यालय में नामांकन स्थिति, ठहराव स्थिति एवं शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन : जबलपुर जिले के संदर्भ में	25-29
8.	श्रीमती संगीता कौल उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं की छात्र-छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि पर पाठ्य सहगामी क्रियाओं में सहभागिता का प्रभाव	30-33
9.	डॉ. (श्रीमती) सविता गुप्ता / श्रीमती निर्मला मिश्रा माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों में अंतर का अध्ययन	34-38
10.	डॉ. (श्रीमती) सुलक्षणा त्रिपाठी निदानात्मक परीक्षण का विज्ञान शिक्षण में महत्व	39-42
11.	डॉ. (श्रीमती) तृप्ति श्रीवास्तव मूल्यों के निर्माण में परिवार, विद्यालय एवं समाज की भूमिका	43-46
12-	Mrs. Aparajita Sengupta An insight to the link between Educators & Quality Enhancement in School Education	47-51

13. **Mr. Lokesh Patle / Mrs. Shweta Singh** 52-64
A Review of Research on Mobile devices in Attractive learning Devices for Teacher Education
14. **Dr. Nivedita Paul** 65-69
Comparative Study of Personality of Under graduate Day Scholar and Hostellers of Rani Durgawati Vishwavidyalaya, Jabalpur
15. **Mrs. Rashi Dubey Mishra** 70-75
A Study of Multicultural Attitude in Teacher Trainees
- साहित्य / Literature**
16. **अंजली जैन** 76-78
मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में बुंदेली संस्कृति
17. **डॉ. अरुणा विश्वकर्मा** 79-81
श्रीलाल शुक्ल के उपन्यासों में पात्र एवं कथानक में प्रतीकात्मकता
- 18- **Dr. Rashmi Singh** 82-83
Feministic View of "I Want "
19. **Dr. (Mrs.) Shruti Shrivastava / Mrs. Ranjana Sahu** 84-89
Relationship of Man, Nature and Literature
- मनोविज्ञान / Psychology**
20. **Mrs. Rajani Rai / Dr. Manju Lata Choudhary** 90-94
Relationship between Occupational Stress, Psychological Well-Being and Quality of Work Life of Government School Teacher's
- वाणिज्य / Commerce**
21. **श्रीमती प्रियंका ताम्रकार** 95-96
ऑनलाइन विपणन [Online Marketing] भारत में भविष्य
22. **सतदीर कौर आहलुवालिया** 97-102
भारत में ऑटोमोबाइल कम्पनियों का परिचय
- पुस्तकालय विज्ञान / Library Science**
23. **Mrs. Preeti Sahu** 103-107
DIGITAL LIBRARY- ITS NEED

माध्यमिक कक्षा के विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि का शैक्षिक
उपलब्धि पर प्रभाव

डॉ. (श्रीमती) अनुपमा ब्योहार*

शोध सार

विद्यार्थियों के जीवन की गुणवत्ता उनके संवेगों के नियंत्रण से प्रभावित होती है। जीवन में सफलता केवल भौतिक संसाधनों से ही नहीं होती, वरन् वास्तविक शांति के लिये सहयोग, त्याग एवं स्नेह तथा प्रेम जैसे जीवन मूल्यों की आवश्यकता होती है, परंतु सभी विद्यार्थियों के लिये इन पर अमल करना आसान नहीं है। गुस्सा और चिड़चिड़ापन तो आसानी से हो जाता है, पर शांत एवं नियंत्रित रहना कठिन है। विद्यार्थियों की भावनाओं में होने वाली उथल-पुथल उनके कार्य के निष्पादन की गुणवत्ता को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। संवेगों पर नियंत्रण रखकर कार्य करना संवेगात्मक बुद्धि का लक्षण है। प्रबंधन के क्षेत्र में तीव्र गति से होने वाले विकास ने इस प्रत्यय के महत्व को बहुत अधिक बढ़ा दिया है। संवेगात्मक बुद्धि से परिपूर्ण विद्यार्थियों की सारी शक्तियाँ सकारात्मक कार्य में लगी रहती हैं इसलिये वे अपनी क्षमताओं का अधिकतम उपयोग कर सकते हैं। प्रस्तुत शोध कार्य का उद्देश्य माध्यमिक कक्षा के विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि का छात्र/छात्राओं/विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन करना है। प्रस्तुत शोध के लिये सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। न्यादर्श के रूप में 200 (100 छात्र + 100 छात्राओं) को लिया गया है। निष्कर्ष से ज्ञात होता है कि छात्र, छात्राओं एवं विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

बालक का विकास और उन्नयन शिक्षा पर ही निर्भर है। शिक्षा व्यक्तित्व का निर्माण भी करती है और श्रृंगार भी करती है। जन्म के समय बालक पशुवत् आचरण करता है, उस समय वह अपनी मूल प्रवृत्तियों से प्रेरित होकर कार्य करता है। शिक्षा उसकी इन प्रवृत्तियों का उचित मार्गदर्शन करके उसे परिपक्वता प्रदान करती है। विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के सभी पक्षों का विकास करके ही विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास किया जा सकता है। वर्तमान समय में शिक्षा शास्त्री विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक कौशलों के साथ-साथ इस बात पर बल देते हैं कि विद्यार्थियों में संवेगात्मक एवं सामाजिक कौशलों का विकास हो, जिससे उसके व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास हो सके। शिक्षा आयोगों ने भी पाठ्यक्रम में ऐसे अधिगम अनुभवों के समावेश पर बल दिया है, जिससे कि विद्यार्थियों के विचार, भावनाओं एवं क्रियाओं में सुधार हो सके।

संवेगात्मक बुद्धि व्यक्ति को उसकी अद्वितीय क्षमता द्वारा जीवन के पूर्व निर्धारित उद्देश्यों का अनुसरण करने के लिये प्रेरित करती है एवं अंतर्निहित मूल्यों को जागृत कर क्षमताओं को कार्यरूप में परिणित करती है। यह स्वयं की एवं दूसरों की भावनायें समझने व अभिव्यक्त करने में सहायक होती हैं। पिछले कुछ वर्षों में संवेगात्मक बुद्धि न केवल अत्यधिक लोकप्रिय हुई है, वरन् उसके अनेक कारणों पर महत्वपूर्ण अनुसंधान कार्य हुए हैं। मनोवैज्ञानिकों एवं शिक्षाशास्त्रियों का मानना है कि यह एक ऐसा कारक है जिसे सीमाओं में बांधा नहीं जा सकता है। संवेगात्मक बुद्धि का संबंध अप्रत्यक्ष रूप से थार्नडाइक (1920) द्वारा प्रतिपादित सामाजिक बुद्धि से है, जिसमें अंतर्व्यक्तिक संबंधों को प्रमुखता दी जाती है। यहाँ तक कि गार्डनर (1983) ने इसे अंतर्व्यक्तिक बुद्धि भी कहा है। इसके अंतर्गत अन्य व्यक्तियों को समझने की योग्यता सम्मिलित है। मेयर एवं सालोवी ने 1995 में संवेगात्मक बुद्धि के प्रत्यय को न केवल बताया, बल्कि इसकी विशेषताओं के कारण इस क्षेत्र में अत्यन्त गहन कार्य करके इसे अत्यधिक लोकप्रिय बनाया जिससे यह मान्यता हुई कि संवेगात्मक बुद्धि के अंतर्गत आत्मजागरूकता, स्व-प्रबंधन, स्व-प्रेरणा, परानुभूति एवं सामाजिक कौशल समाविष्ट

*प्राचार्य, ए.पी.एन. महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

होते हैं। फेल्डमैन एवं वेल (1990-97) ने सृजनात्मक नेतृत्व व संवेगात्मक बुद्धि की आवश्यकता का अध्ययन कर बताया कि संवेगात्मक कार्य नेतृत्व की सफलता के कारणों से संबंधित है। ड्रेगो जूडी एम. (2005) ने महाविद्यालयीन विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य संबंध का अध्ययन किया। परिणामों से स्पष्ट हुआ कि संवेगात्मक बुद्धि, विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि के प्राप्तांकों के साथ सार्थक रूप से संबंधित थी। आर. सारण्य एवं ए. वेलायुधन (2008) ने विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के सामाजिक व्यवहार एवं संवेगात्मक बुद्धि का विश्लेषण किया। निश्कर्ष में पाया गया कि सामाजिक व्यवहार के निर्धारण में संवेगात्मक बुद्धि की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। निराधर, डे (2009) ने शैक्षिक स्व-सामर्थ्यता एवं उपलब्धि पर संवेगात्मक बुद्धि के प्रभाव का अध्ययन किया। निश्कर्ष से यह ज्ञात हुआ कि जिन छात्रों की संवेगात्मक बुद्धि का स्तर उच्च था, उनमें न केवल शैक्षिक स्व-सामर्थ्यता अधिक थी, वरन् उनकी शैक्षिक उपलब्धि का स्तर भी उच्च था।

सामान्य जीवन में अनेक ऐसे अवसर आते हैं, जब विद्यार्थियों को छोटी-छोटी बातों पर अपने संवेगों पर नियंत्रण खोते हुए देखा गया है। इस परिस्थिति को टाला जा सकता है। इसके विपरीत कुछ विद्यार्थी ऐसे भी होते हैं, जो विपरीत परिस्थितियों में भी शांत बने रहते हैं, अर्थात् कुछ विद्यार्थी अपने संवेगों का प्रबंधन कर लेते हैं, जबकि कुछ अन्य नहीं। जो विद्यार्थी अपने संवेगों पर नियंत्रण कर लेते हैं, वे विपरीत एवं जटिल परिस्थितियों में भी उचित निर्णय ले पाते हैं। ऐसे विद्यार्थी विभिन्न परिस्थितियों में ज्यादा कुशलतापूर्वक कार्य का निष्पादन करने में भी समर्थ होते हैं, चाहे वह पारिवारिक कार्य क्षेत्र अथवा कोई सामाजिक स्थिति क्यों न हो। शैक्षिक उपलब्धि की विद्यार्थियों के जीवन में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। किसी विद्यार्थी की प्रगति का आंकलन उसकी शैक्षिक उपलब्धि से ही किया जाता है। अतः इस बात की आवश्यकता प्रतीत हुई कि यह अध्ययन किया जाय कि विद्यार्थी की संवेगात्मक बुद्धि उसकी शैक्षिक उपलब्धि को किस प्रकार प्रभावित करती है। साथ ही शिक्षाविदों एवं शैक्षिक प्रशासकों को भी सुझाव दिये जा सकें कि पाठ्यक्रम में किस प्रकार का परिमार्जन किया जाये, जिससे विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि के विकास हेतु प्रशिक्षण के माध्यम से पुर्नबलन दिया जा सके एवं विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाने के लिये कौशल आधारित पाठ्यक्रम का विकास हो जिससे कि विद्यार्थी अनावश्यक चिंता से मुक्त होकर व्यावसायिक तत्परता एवं दक्षता प्राप्त करने के लिये उन्मुखीकृत हो सकें।

इस प्रकार प्रस्तुत शोधकार्य विद्यार्थियों के भावी व्यावसायिक जीवन के लिये अपना एक महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगा, क्योंकि प्राप्त निष्कर्ष विद्यार्थियों के मार्गदर्शन एवं परामर्श के क्षेत्र में एक नई क्रांति ला देंगे जो विद्यार्थियों के सुखद भविष्य के लिये आवश्यक है, जिसमें वे अपनी योग्यताओं एवं क्षमताओं तथा अन्य मनोवैज्ञानिक विशेषताओं को विकसित कर सकेंगे।

उद्देश्य – माध्यमिक कक्षा के विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि का छात्र/छात्राओं/विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन।

परिकल्पना – माध्यमिक कक्षा के विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि का छात्र/छात्राओं/विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

चर- स्वतंत्र चर – संवेगात्मक बुद्धि
आश्रित चर – शैक्षिक उपलब्धि
नियंत्रित चर – कक्षा 9 वीं एवं आयु 12-14 वर्ष

न्यादर्श –

न्यादर्श तालिका

संवेगात्मक बुद्धि स्तर	छात्र	छात्राएं	कुल योग
उच्च	20	20	40
औसत	60	60	120
निम्न	20	20	40
कुल योग	100	100	200

उपकरण–

संवेगात्मक बुद्धि मापनी– अनुकूल हाइड, संजोत पेठे एवं उपेन्द्र धर

विधि–

कक्षा 9 वीं के विद्यार्थियों पर संवेगात्मक बुद्धि मापनी का प्रशासन कर फलांकन करके उच्च, औसत एवं निम्न संवेगात्मक बुद्धि के छात्रों का चयन किया गया। शैक्षिक उपलब्धि ज्ञात करने के लिये उनके 8 वीं कक्षा के प्राप्तांकों को प्राप्त किया गया एवं मध्यमान, मानक विचलन, क्रांतिक अनुपात तथा 'एफ' अनुपात ज्ञात किया गया।

परिणामों का विश्लेषण – न्यादर्श से प्राप्त प्रदत्त का सांख्यिकीय विश्लेषण निम्नांकित तालिकाओं में प्रस्तुत किया गया है –

तालिका क्रमांक – 01

छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि पर संवेगात्मक बुद्धि के प्रभाव संबंधी परिणाम

संवेगात्मक बुद्धि	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन
उच्च	20	58.30	10.06
औसत	60	57.17	9.78
निम्न	20	53.95	8.57

प्रसरण विश्लेषण की सारांश तालिका

प्रसरण के स्रोत	स्वतंत्रता के अंश	वर्गों का योग	मध्यमान वर्ग	'एफ' अनुपात	'पी' मान
समूहों के बीच	2	1823.79	911.89	0.59	>0.05
समूहों के मध्य	97	150491.08	1551.45		

स्वतंत्रता के अंश – 2, 97

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान–3.09

उपरोक्त तालिका में छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि पर संवेगात्मक बुद्धि के प्रभाव संबंधी परिणामों से स्पष्ट होता है कि विभिन्न संवेगात्मक बुद्धि के छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक अंतर नहीं है। अतः उपरोक्त परिणामों के परिप्रेक्ष्य में निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि, उनकी संवेगात्मक बुद्धि से प्रभावित नहीं हुई।

तालिका क्रमांक -02

छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि पर संवेगात्मक बुद्धि के प्रभाव संबंधी परिणाम

संवेगात्मक बुद्धि	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन
उच्च	20	65.55	11.27
औसत	60	58.58	9.35
निम्न	20	58.60	10.70

प्रसरण विश्लेषण की सारांश तालिका

प्रसरण के स्रोत	स्वतंत्रता के अंश	वर्गों का योग	मध्यमान वर्ग	'एफ' अनुपात	'पी' मान
समूहों के बीच	2	993.19	496.59	0.28	>0.05
समूहों के मध्य	97	169422.13	1746.62		

स्वतंत्रता के अंश - 2, 97

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान 3.09

उपरोक्त तालिका में छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि पर संवेगात्मक बुद्धि के प्रभाव संबंधी परिणामों से स्पष्ट होता है कि विभिन्न संवेगात्मक बुद्धि की छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक अंतर नहीं है। अतः उपरोक्त परिणामों के परिप्रेक्ष्य में निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि, उनकी संवेगात्मक बुद्धि से प्रभावित नहीं हुई।

तालिका क्रमांक - 03

विद्यार्थियों (छात्र+छात्राओं) की शैक्षिक उपलब्धि पर संवेगात्मक बुद्धि के प्रभाव संबंधी परिणाम

संवेगात्मक बुद्धि	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन
उच्च	40	61.93	11.17
औसत	120	57.88	9.55
निम्न	40	56.28	9.85

प्रसरण विश्लेषण की सारांश तालिका

प्रसरण के स्रोत	स्वतंत्रता के आं	वर्गों का योग	मध्यमान वर्ग	'एफ' अनुपात	'पी' मान
समूहों के बीच	2	2699.72	1349.86	0.83	>0.05
समूहों के मध्य	197	320320.25	1625.99		

स्वतंत्रता के अंश – 2,197

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान–3.04

उपरोक्त तालिका में विद्यार्थियों (छात्रों+छात्राओं) की शैक्षिक उपलब्धि पर संवेगात्मक बुद्धि के प्रभाव संबंधी परिणामों से स्पष्ट होता है कि विभिन्न संवेगात्मक बुद्धि के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक अंतर नहीं है। अतः उपरोक्त परिणामों के संदर्भ में निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि विद्यार्थियों (छात्र+छात्रा) की शैक्षिक उपलब्धि, उनकी संवेगात्मक बुद्धि से प्रभावित नहीं हुई है।

संवेगात्मक बुद्धि के शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव संबंधी परिणामों से स्पष्ट होता है कि विभिन्न संवेगात्मक बुद्धि स्तर के छात्र एवं छात्राओं तथा विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक अंतर नहीं है। शैक्षिक उपलब्धि को अनेक कारक प्रभावित करते हैं एवं कारकों की तीव्रता यह निश्चित करती है कि कारकों का शैक्षिक उपलब्धि पर किस प्रकार का प्रभाव पड़ रहा है। वर्तमान प्रतियोगिता के समय में शैक्षिक उपलब्धि को प्रतियोगी परीक्षा में सहभागिता ने भी प्रभावित किया है। सामान्य रूप से अब विद्यार्थी अपनी नियमित शैक्षिक उपलब्धि पर उतना अधिक ध्यान न देकर प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी एवं उसमें सफलता पर ध्यान देते हैं। संवेगात्मक बुद्धि निश्चित रूप से व्यक्तियों के संवेगों पर आधारित है, जिसके अंतर्गत आत्म जागरूकता, स्व प्रबंधन, स्वप्रेरणा, सहानुभूति एवं सामाजिक कौशल हैं। सामान्य रूप से संवेगों की तीव्रता किसी भी कार्य को प्रभावित करती है, परंतु ऐसा प्रतीत होता है कि भविष्य के प्रतियोगी परीक्षा के प्रत्यक्षीकरण ने विद्यार्थियों के दृष्टिकोण में व्यापक अंतर ला दिया है। प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी में प्रतियोगी परीक्षा संस्थानों का प्रशिक्षण उनकी न केवल शैक्षिक बल्कि व्यावसायिक परीक्षा की उपलब्धि को भी प्रभावित करने की क्षमता रखता है। ऐसी स्थिति में संवेगात्मक बुद्धि की भूमिका बहुत अधिक नहीं रह जाती है। संवेगात्मक बुद्धि में प्रशिक्षण के माध्यम से वृद्धि हो जाती है, जो विभिन्न अनुसंधान परिणामों से स्पष्ट होता है। वर्तमान अनुसंधान में छात्र एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि उनकी संवेगात्मक बुद्धि से प्रभावित नहीं हुई है। शैक्षिक उपलब्धि को जो अन्य कारक प्रभावित करते हैं, उनमें विद्यार्थियों का शैक्षिक एवं व्यावसायिक आकांक्षा स्तर, आत्म प्रत्यय, उपलब्धि अभिप्रेरणा एवं व्यावसायिक आत्म प्रत्यय, आदि आते हैं। इस प्रकार छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि में समानता इन कारकों की उपस्थिति के फलस्वरूप भी हो सकती है, जिसके कारण संवेगात्मक बुद्धि ने छात्र एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित नहीं किया।

पूर्व अनुसंधानों के परिपेक्ष्य में यदि वर्तमान अनुसंधान कार्य के परिणामों को जोड़ा जाये तो छात्र एवं छात्राओं के परिपेक्ष्य में यह परिणाम **जूडी एम. ड्रेगो (2005)** के परिणामों के अनुरूप नहीं है, जिसमें उन्होंने जब महाविद्यालय विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य संबंध का अध्ययन किया तब निष्कर्ष स्वरूप यह पता चला कि संवेगात्मक बुद्धि का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के साथ सार्थक रूप से सकारात्मक संबंध था। जिन विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि अधिक थी, उनकी शैक्षिक उपलब्धि भी अधिक पाई गई। एक अन्य अनुसंधान में **डेनियल वोनोली हैरीगन (2002)** संवेगात्मक बुद्धि एवं सामान्य स्वास्थ्य के मध्य संबंध का अध्ययन किया, यह शोध कार्य शैक्षिक उपलब्धि से तो संबंधित नहीं था, परंतु उन्होंने जो परिणाम प्राप्त किये उससे यह

स्पष्ट हुआ कि संवेगात्मक बुद्धि एवं स्वास्थ्य के स्व-मूल्यांकन के बीच कोई संबंध नहीं था। परिणामों से यह भी स्पष्ट हुआ कि विद्यार्थियों की शिक्षा की अवधि एवं संवेगात्मक बुद्धि के मध्य भी कोई सह-संबंध नहीं था यह इस बात को इंगित करते हैं कि सामान्य शिक्षा एवं संवेगात्मक बुद्धि के मध्य संबंध नहीं होता है एवं शोध परिणामों से जो बात उभर कर आती है, वह यह है कि छात्र एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि उनकी संवेगात्मक बुद्धि से प्रभावित नहीं होती।

निष्कर्ष:- माध्यमिक कक्षा के विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि का छात्र छात्राओं एवं विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है।

संदर्भ ग्रन्थ-

1. कपिल, डॉ. एच.के. (2005), सांख्यिकीय के मूल तत्व, आगरा (उ.प्र.), विनोद पुस्तक मंदिर, नवीनतम संस्करण पृ.सं. 298
2. कोली लक्ष्मी नारायण (2003), रिसर्च मेथडॉलॉजी, आगरा (उ.प्र.), वाय के पब्लिशर्स, नवीनतम संस्करण पृ.सं. 97
3. शर्मा, डॉ. पी.एल. एवं शर्मा, डॉ.वाइ. के. (2008) सामाजिक अनुसंधान-सामाजिक अन्वेषण में सर्वेक्षण विधियाँ, जयपुर (राजस्थान) यूनिवर्सिटी बुक हाउस (प्रा.लि.), प्रथम संस्करण, पृ.सं. 200
4. शर्मा, वीरेन्द्र प्रकाश (2004), रिसर्च मेथडॉलॉजी, जबलपुर (म.प्र.) पंचशील प्रकाशन, तृतीय संस्करण, पृ.सं. 166
5. गैरेट, हेनरी ई. एवं वुडवर्थ, आर. एस. (2007), शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकी नई दिल्ली, कल्याणी पब्लिशर्स, नवीनतम संस्करण, पृ.सं. 317
6. मंगल, एस.के. (2008), शिक्षा मनोविज्ञान, (हिन्दी), नई दिल्ली, प्रेंटिस हॉल ऑफ इंडिया, प्राईवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण, पृ.सं. 126
- 7- Balamurugan, Mand Godhaman K (2009)- Emotional Intelligence- Need and Importance, *Psycho-Lingua, Vol.39 (2), pg.117-120.*
- 8- Buch, N.B., Ed. Fifth Survey of Educational Research, 1988-92 Vol.-1, NCERT, New Delhi, pg.726.
- 9- Ciarrochi, J.V., Chan, A.Y.C. & Caputi, P.(2001), A critical evaluation of the Emotional Intelligence construct, *Personality and Individual Differences Vol. 28, pg. 539-561.*
- 10- Dey, Niradhar (2009)- Influence of Emotional Intelligence on Academic Self- Efficacy and Achievement:- *Psycho Lingua, Vol 39(2) Page 171-174.*
- 11- Drago, Judy M. (2005), Dissertation Abstracts International Section B. The Science and Engineering. Vol. 65 (9-B) 2005.
- 12- Golman, Daniel (1995), Emotional Intelligence, New York, Bantam Books.
- 13- Mayer, J.D. and Cobb, C.D. (2000), Educational Policy on Emotional Intelligence: Does it make sense? *Educational Psychology Review, Vol. 12 (1), pg. 163-183.*
- 14- Saranya, R. and Velayudhan,, A -(2008), Analysing Pro-Social behaviour of Emotional Intelligence among University Students, *Psycho- Lingua Vol. 39 (2), Page 126-132.*
- 15- Davies Leah, Emotional Intelligence- A Essential Component of Education, (Internet Matter)

किशोर विद्यार्थियों के बुद्धि एवं सृजनात्मक चिंतन के मध्य संबंध का अध्ययन

श्रीमती डिम्पल वर्मा*

शोध सार

प्रस्तुत शोध कार्य का उद्देश्य किशोर विद्यार्थियों के बुद्धि एवं सृजनात्मक चिंतन के मध्य संबंध का अध्ययन करना था। अध्ययन में जबलपुर (म.प्र.) के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों से नवमी कक्षा के 400 विद्यार्थियों (200-छात्र एवं 200 छात्राओं) को न्यादर्श स्वरूप लिया गया। अध्ययन में शाब्दिक बुद्धि परीक्षण-डॉ. पी. श्रीनिवासन एवं सृजनात्मक चिंतन क्षमता शाब्दिक परीक्षण-डॉ. बॉकर मेहदी का उपयोग किया गया। आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण के लिये सहसंबंध गुणांक का प्रयोग किया गया। शोध परिणामों से यह स्पष्ट होता है कि सृजनात्मकता एवं बौद्धिक स्तर के मध्य सार्थक सहसंबंध हैं।

प्रस्तावना :-

वर्तमान में संपूर्ण विश्व तीव्र गति से हो रहे परिवर्तनों का सामना कर रहा है। तेजी से बदलते इस युग में बढ़ती प्रतियोगिता के कारण जीवन जटिल होता जा रहा है। मनुष्य को जीवित रहने के लिये नया करते रहना अति आवश्यक है। इसे सृजनात्मक सोच कहते हैं। सृजनात्मक व्यक्तियों की उपलब्धि का मूल्यांकन आसानी से नहीं हो पाता क्योंकि वे ऐसा उत्पादक कार्य करते हैं जो कोई नहीं कर पाता। एक देश के विकास में भौतिक संसाधनों से ज्यादा मानवीय संसाधनों पर, उच्च क्षमताओं वाले बुद्धिजीवियों के कंधों पर, प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करने की जिम्मेदारी है। प्रत्येक व्यक्ति में बौद्धिक क्षमता का स्तर अलग अलग होता है तथा समान बौद्धिक स्तर के लोगों में भी अलग-अलग प्रकार की योग्यताएँ होती हैं। बुद्धि एवं सृजनात्मकता के मध्य संबंधों का अध्ययन कई मनोवैज्ञानिकों ने किया है – मारग्यूस, सी.वी. एवं अन्य (2015) ने इनमें संबंधों को पाया है। जॉक, इमैनुअल एवं अन्य (2013) ने अपने अध्ययन में पाया कि बुद्धि का प्रभाव सृजनात्मकता को कम या ज्यादा प्रभावित करता ही है। इसी प्रकार पालानिअप्पन कुमार आनंद ने शैक्षिक उपलब्धि बढ़ाने के लिये सृजनात्मकता को माध्यम बनाने की बात कही है। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में किशोरों की बौद्धिक क्षमता एवं सृजनात्मक चिंतन के मध्य संबंधों का अध्ययन किया जाये जिससे विद्यार्थियों को उचित मार्गदर्शन प्रदान किया जा सके।

उद्देश्य :-

1. किशोर छात्र/छात्राओं/विद्यार्थियों की बुद्धि एवं सृजनात्मक चिंतन क्षमता- लचीलापन/धारा प्रवाहशीलता/मौलिकता के मध्य संबंधों का अध्ययन।

परिकल्पना :-

1. किशोर छात्र/छात्राओं/विद्यार्थियों की बुद्धि एवं सृजनात्मक चिंतन क्षमता-लचीलापन/धाराप्रवाहशीलता/मौलिकता के मध्य सार्थक संबंध नहीं होता है।

न्यादर्श :-

नवमी कक्षा में अध्ययनरत 14-16 वर्ष के विद्यार्थी

* अतिथि व्याख्याता, शिक्षा विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

तालिका 0.1
न्यादर्श तालिका

समूह	संख्या
छात्र	200
छात्रायें	200
कुल	400

उपकरण :-

प्रस्तुत शोध कार्य में निम्नांकित परीक्षणों का उपयोग किया गया ।

1.शाब्दिक बुद्धि परीक्षण- डॉ.पी.श्रीनिवासन

2.सृजनात्मक चिंतन क्षमता शाब्दिक परीक्षण - डॉ. बॉकर मेहदी ।

विधि :-

न्यादर्श में चयनित विद्यार्थियों पर शाब्दिक बुद्धि परीक्षण- डॉ.पी. श्रीनिवासन एवं बॉकर मेहदी के सृजनात्मक चिंतन क्षमता शाब्दिक परीक्षण (TCW) का प्रशासन किया गया तथा बुद्धि एवं सृजनात्मकता के आयामों के मध्य सहसंबंध गुणांक की गणना की गई ।

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या :- परिणामों को निम्न तालिका में प्रस्तुत किया गया है -
तालिका क्र. 02

छात्र-छात्राओं एवं विद्यार्थियों के बौद्धिक स्तर एवं सृजनात्मकता के कारक धाराप्रवाहशीलता, लचीलापन एवं मौलिकता के सह-संबंधी परिणाम

समूह	चर	संख्या	सह-संबंध	पी-मान
छात्र		200	+ 0.40	<0.01
छात्रायें	बुद्धि/धारा प्रवाहशीलता	200	+ 0.32	<0.01
छात्र-छात्रायें		400	+ 0.36	< 0.01
छात्र		200	+ 0.41	<0.01
छात्रायें	बुद्धि/लचीलापन	200	+ 0.179	<0.05
छात्र-छात्रायें		400	+ 0.30	< 0.01
छात्र	बुद्धि/ मौलिकता	200	+ 0.38	<0.01
छात्रायें		200	+ 0.16	<0.05
छात्र-छात्रायें		400	+ 0.26	< 0.01

व्याख्या :-

प्रस्तुत शोध कार्य में छात्र-छात्राओं एवं विद्यार्थियों के बौद्धिक स्तर एवं सृजनात्मकता के कारक धाराप्रवाहशीलता, लचीलापन एवं मौलिकता के सह-संबंधी परिणामों से स्पष्ट होता है कि बौद्धिक स्तर/बुद्धि एवं सृजनात्मकता के कारकों के मध्य सकारात्मक सार्थक संबंध हैं (तालिका क्र.2)। यह परिणाम इस बात को प्रदर्शित करते हैं कि जैसे जैसे बौद्धिक स्तर में वृद्धि होती है वैसे-वैसे सृजनात्मकता का भी विकास होता है। प्राप्त परिणामों से बुद्धि का प्रभाव सृजनात्मक चिंतन क्षमता पर दर्शित है। सृजनात्मकता में मानसिक योग्यतायें निहित होती हैं और ये आसपास के वातावरण से सामंजस्य स्थापित करने इनका उपयोग करती हैं। सृजनात्मकता से किसी उपलब्धि को निर्देशन प्राप्त होता है जो नई और भिन्न परिस्थितियों में भी मार्गदर्शन करती है। मारग्यूस सी.वी. एवं अन्य (2015) ने मध्य बचपन से किशोरावस्था तक के बच्चों के विश्लेषणात्मक कौशलों के मध्य संबंधों के अध्ययन में बुद्धि एवं सृजनात्मकता के मध्य संबंध पाया। इसी प्रकार जॉक इमैनुअल एवं अन्य (2013) ने अध्ययन में पाया कि अलग-अलग बौद्धिक स्तर के लिये, अलग-अलग तरह के सृजनात्मक विचारों के लिए अलग-अलग सीमांत बिन्दु रहते हैं यह इस बात का समर्थन करती है कि बुद्धि का प्रभाव सृजनात्मकता को कम या ज्यादा प्रभावित करता ही है। इसी तरह पालानिअप्पन कुमार आनंद ने सृजनात्मकता एवं शैक्षिक उपलब्धि के बीच संबंधों के अध्ययन में परिणामों के माध्यम से यह निष्कर्ष निकाला कि बौद्धिक स्तर निम्न होने पर शैक्षिक उपलब्धि की बढ़ोत्तरी के लिये सृजनात्मकता को माध्यम बनाया जा सकता है। विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि सृजनात्मकता व्यक्ति एवं बुद्धि में स्तब्ध संबंध होता है तथा व्यक्ति सृजन करने की क्षमता रखता है। अतः किसी तथ्य, समस्या की व्याख्या करने की क्षमता सृजनात्मक शक्तियों से पूर्ण होती है, वे अपनी अभिव्यक्तियों के द्वारा व्यक्ति के विचार, विश्वास तथा धारणा में परिवर्तन करने वाले होते हैं।

शोध परिणामों से यह स्पष्ट हो रहा है कि सृजनात्मकता एवं बौद्धिक स्तर के मध्य सार्थक संबंध है। यह परिणाम विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास के लिए मार्गप्रदर्शन प्रदान करने में सहायक हो सकते हैं। सृजनात्मकता के प्रशिक्षण के साथ सृजनात्मकता का विकास हो सकता है तो उसके माध्यम से विद्यार्थी अपनी बौद्धिक क्षमता का अधिकतम संभाव्य उपयोग कर सकेंगे।

निष्कर्ष :- प्रस्तुत शोध के परिणामों से ज्ञात निष्कर्ष इस प्रकार से हैं -

1. बुद्धि एवं सृजनात्मक चिंतन क्षमता के कारक धारा प्रवाहशीलता के मध्य सार्थक सहसंबंध पाया गया।
2. बुद्धि एवं सृजनात्मक चिंतन क्षमता के कारक लचीलापन के मध्य सार्थक सहसंबंध पाया गया।
3. बुद्धि एवं सृजनात्मक चिंतन क्षमता के कारक मौलिकता के मध्य सार्थक सहसंबंध पाया गया।

संदर्भ :-

- अस्थाना, विपिन (1999). *मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन*, नवीनतम संस्करण, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर, पृष्ठ संख्या 276-279
- Guilford, J.P. (1950). "Creativity", *The American Psychologist*, Vol.9, pp 444-45.
- मित्तल, संतोष; (1995), *शैक्षिक तकनीकी*, प्रथम संस्करण, जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पृष्ठ क्र. 56
- पाण्डेय, गणेश, पाण्डेय, अरुणा (2005). *शोध प्रविधि*, प्रथम संस्करण, नई दिल्ली : राधा पब्लिकेशन, पृष्ठ संख्या 124-128
- Palanippan, A.K.(2005). *Creativity and Academic Achievement, A Malaysian Perspective*, Shah Alam: Karis Pub.
- शर्मा आर.ए. (2003). *शिक्षा अनुसंधान*, नवीनतम संस्करण, मेरठ : सूर्या पब्लिकेशन, पृष्ठ क्र. 70, 94, 120
- वर्मा, प्रीति एवं श्रीवास्तव, डी.एन. (2008), *आधुनिक प्रयोगात्मक मनोविज्ञान*, सोलहवाँ संस्करण, आगरा : अग्रवाल प्रकाशन पृष्ठ क्र. 8

उच्चतर माध्यमिक शाला के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन

श्रीमती जया चतुर्वेदी*
डॉ. (श्रीमती) श्वेता पाण्डे**

शोध सार

प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य उच्चतर माध्यमिक शाला के विद्यार्थियों की पर्यावरण जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति में सहसंबंध का अध्ययन करना तथा उच्चतर माध्यमिक शाला के विद्यार्थियों में पर्यावरणीय जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति में लिंग भिन्नताओं का अध्ययन करना था। प्रस्तुत अध्ययन में जबलपुर शहर के 2 उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में से 100 कला संकाय के विद्यार्थियों का चयन (50 छात्राओं एवं 50 छात्रों) यादृच्छिक विधि से किया गया। छात्र-छात्राओं के पर्यावरण जागरूकता को मापने के लिए प्रवीण कुमार झा द्वारा निर्मित पर्यावरण जागरूकता मापनी तथा स्वच्छता अभियान के प्रति अभिवृत्ति के लिए स्वनिर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया। प्राप्त आंकड़ों के आधार पर सह-सम्बन्ध एवं क्रांतिक अनुपात के द्वारा परिणामों को प्राप्त किया गया। शोधकर्ता ने शोध में उच्चतर माध्यमिक शाला के विद्यार्थियों में पर्यावरण जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति के मध्य कोई सम्बंध नहीं पाया तथा छात्रों एवं छात्राओं की पर्यावरणीय जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति में लिंग भिन्नताएं नहीं पायी गई।

भारत वर्ष एक विकासशील देश है। हमारा देश आजादी के बाद से ही अनेक समस्याओं एवं परिस्थितियों से गुजर रहा है जिसमें एक प्रमुख समस्या पर्यावरण की समस्या है। पर्यावरण शिक्षा दार्शिकों को जानने तथा विचारों को स्पष्ट करने की वह प्रक्रिया है जिससे मनुष्य अपनी संस्कृति और जैव भौतिक परिवेश के मध्य अपने आपकी संबद्धता को पहचानने और समझने के लिए आवश्यक कौशल और अभिवृत्ति का विकास कर सके। वर्ष 1986 में प्रस्तुत भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में पर्यावरण शिक्षा के सम्बंध में कहा गया है कि पर्यावरण सजगता के सृजन की आज अत्याधिक आवश्यकता और अधिक हो जाती है क्योंकि पर्यावरण विध्वंस के प्रभाव से सभी प्रभावित हो रहे हैं। पर्यावरण के संरक्षण और सुरक्षा की सजगता के पक्ष को विद्यालयों और महाविद्यालयों के शिक्षण में महत्वपूर्ण स्थान दिया जाये और इस पक्ष को शिक्षा नीति में उपयुक्त प्रकार से सम्बंधित किया जाये। सर्वप्रथम पर्यावरण की गुणवत्ता के बारे में चिंतन मनन वैज्ञानिकों ने किया। धीरे-धीरे समाज के सभी वर्गों तथा विश्व के सभी देशों का इस ओर ध्यान गया। पिछले कुछ वर्षों में आम जनता में भी पर्यावरण से सम्बंधित समस्याओं के समाधान में अपनी रूचि प्रदर्शित की लेकिन यह रूचि एक औपचारिक चेतना मात्र थी जो पर्यावरण को सुधारने के लिए पर्याप्त नहीं थी। अतः माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने "स्वच्छता अभियान" चलाकर पर्यावरणीय संकटों के लिए स्वयं आगे बढ़ने का संकल्प एवं साहस किया। आज देश की सवा सौ करोड़ आबादी में चारों ओर बढ़ती गंदगी और स्वच्छता की नाकामी से लड़ते हुए प्रदूषित वातावरण के सुधार के लिए योजनाएं बनाई गयीं किन्तु इसमें कोई ठोस सफलता नहीं मिल सकी। देश की तेजी से बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए यह निश्चित ही आने वाले समय में भयावह व खतरनाक होकर गंभीर बीमारियों को जन्म देगी और हमारे साथ भावी पीढ़ी को बुरी तरह से प्रभावित करके कमजोर और बीमार बना देगी।

महात्मा गाँधी ने स्वच्छ भारत का सपना देखा था। इस सपने को पूरा करने के लिए प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 2 अक्टूबर 2014 को स्वच्छ भारत अभियान शुरू किया। इस अभियान का उद्देश्य अगले पाँच वर्षों में स्वच्छ भारत का लक्ष्य प्राप्त करना है ताकि बापू की 150 वीं जयंती को इस लक्ष्य की प्राप्ति के रूप में मनाया जा सके। यह अभियान श्रमदान के लिए लोगों को प्रेरित करता है सिर्फ सरकार ही इसे सफल नहीं बना सकती लोगों की सक्रिय भागीदारी भी इसमें जरूरी है। सोनी, बबीता (2003-2004) ने उच्चतर

* सहा. प्राध्यापिका, जबलपुर पब्लिक कॉलेज, करमेता, जबलपुर (म.प्र.)

** प्राचार्य, जबलपुर पब्लिक कॉलेज, करमेता, जबलपुर (म.प्र.)

माध्यमिक विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों में पर्यावरणीय मूल्यों एवं जागरूकता के अध्ययन में पाया कि विद्यार्थियों में पर्यावरण जागरूकता का स्तर उच्च है तथा छात्राओं की तुलना में छात्रों का पर्यावरणीय मूल्यों का स्तर उच्च पाया गया। पॉल, दमयंती (2009-2010) ने भी शोध अध्ययन में पाया कि उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों के पर्यावरणीय मूल्यों पर पर्यावरणीय जागरूकता एवं पर्यावरण अभिवृत्ति का प्रभाव पड़ता है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया जा रहा है कि क्या पर्यावरणीय जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के मध्य कोई सम्बंध है जिससे विद्यार्थियों की पर्यावरणीय जागरूकता का विकास कर उन्हें स्वच्छ भारत अभियान का सहभागी बनाया जा सके।

अध्ययन के उद्देश्य :-

1. उच्चतर माध्यमिक शाला के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति के मध्य सम्बंध का अध्ययन।
2. उच्चतर माध्यमिक शाला के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय जागरूकता में लिंग भिन्नताओं का अध्ययन।
3. उच्चतर माध्यमिक शाला के विद्यार्थियों की स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति में लिंग भिन्नताओं का अध्ययन।

परिकल्पनाएं :-

1. उच्चतर माध्यमिक शाला के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति के मध्य कोई सम्बंध नहीं होता है।
2. उच्चतर माध्यमिक शाला के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय जागरूकता में सार्थक लिंग भिन्नताएं नहीं होती है।
3. उच्चतर माध्यमिक शाला के विद्यार्थियों की स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक लिंग भिन्नताएं नहीं होती है।

शोध विधि :-

प्रस्तुत शोध अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

न्यादर्श :-

अध्ययन में जबलपुर के 2 उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में से कला संकाय के 100 विद्यार्थियों (50 छात्राओं एवं 50 छात्रों) का चयन किया गया।

उपकरण :-

1. पर्यावरण जागरूकता मापनी – प्रवीण कुमार झा
2. स्वच्छता अभियान के प्रति अभिवृत्ति – स्वनिर्मित प्रश्नावली

विधि :-

न्यादर्श में चयनित विद्यार्थियों पर पर्यावरणीय जागरूकता मापनी एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति मापनी का प्रशासन कर प्रदत्त प्राप्त किये गये एवं उनका सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया।

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या :- इसे निम्नानुसार किया गया है।

तालिका क्रमांक -1

पर्यावरणीय जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति में सह सम्बंध संबंधी परिणाम

समूह	चर	संख्या	सह सम्बंध	'पी' मान
छात्र	पर्यावरणीय जागरूकता	50	0.012	>0.05
	स्वच्छ भारत अभियान	50		
छात्रा	पर्यावरणीय जागरूकता	50	0.20	>0.05
	स्वच्छ भारत अभियान	50		

स्वतंत्रता का अंश -48

0.05 सार्थकता हेतु मान 0.28

उपर्युक्त तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट है कि पर्यावरण जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति में छात्र एवं छात्राओं के सह सम्बंध गुणांकों का मान क्रमशः 0.012 तथा 0.20 हैं जो कि .05 के सार्थकता स्तर के न्यूनतम निर्धारित मान से कम हैं। अतः यह पर्यावरणीय जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति के मध्य कोई सम्बंध को नहीं दर्शाता है।

तालिका क्रमांक -2

पर्यावरणीय जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति में लिंग भिन्नताओं संबंधी परिणाम

चर	समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
पर्यावरणीय जागरूकता	छात्र	50	23.58	2.12	1.56	>0.05
	छात्रा	50	22.86	2.55		
स्वच्छ भारत अभियान	छात्र	50	40.20	3.63	1.31	>0.05
	छात्रा	50	39.14	4.42		

स्वतंत्रता के अंश -98

0.05 सार्थकता हेतु मान-1.98

उपर्युक्त तालिका क्रमांक-2 से स्पष्ट है कि छात्र एवं छात्राओं की पर्यावरणीय जागरूकता का क्रांतिक अनुपात 1.56 तथा स्वच्छ भारत अभियान का 1.31 है जो कि 0.05 के सार्थकता के न्यूनतम निर्धारित मान से कम हैं। अतः पर्यावरणीय जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति में लिंग भिन्नताएं नहीं हैं।

उपर्युक्त परिणामों से स्पष्ट है कि उच्चतर माध्यमिक शाला के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान में प्रति अभिवृत्ति के मध्य सार्थक सम्बंध नहीं हैं। अतः पर्यावरणीय एवं स्वच्छ भारत अभियान की अवधारणा को पिछले कुछ दिनों में जोर दिया गया है एवं उसका प्रचार प्रसार अभी चल रहा है विद्यार्थी यह समझने में असमर्थ हो रहे हैं कि जब पर्यावरणीय जागरूकता होगी उसी समय स्वच्छ भारत अभियान की संकल्पना पर काम किया जा सकता है। पर्यावरणीय जागरूक व्यक्ति ही प्रदूषण के हानिकारक प्रभाव को जानते हुए स्वच्छता की ओर अग्रसित होगा। यदि विद्यार्थियों में पर्यावरणीय जागरूकता के विकास के लिए कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं तो निश्चित रूप से स्वच्छ भारत अभियान के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति का बीजारोपण

होगा ओर उस कार्यक्रम की सफलता की संभावनाएं और अधिक बढ़ जायेगी। विद्यार्थियों को स्वच्छता एवं पर्यावरण जागरूकता के लिए मानसिक रूप से सम्मिलित न होना है। इसके अतिरिक्त लोगों में नैतिक मूल्यों का अभाव है जिससे वे नियमों का पालन करने व श्रमदान के लिए झिझकते हैं। अपना घर साफ व दूसरे का घर गंदा यह परंपरा बन गई है जिसके कारण इस प्रकार के कार्यक्रम केवल शासकीय कार्यक्रम बन कर रह जाते हैं या केवल किसी नियत तिथि पर केंद्रित हो कर रह जाते हैं।

इससे स्पष्ट होता है कि विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता विकसित करने के लिए आवश्यक है कि स्वच्छ भारत अभियान एवं पर्यावरण जागरूकता का और अधिक प्रभावी तरीके से प्रचार प्रसार करना चाहिए, जिससे यह और अधिक कारगर तरीके से लागू किया जा सके जिससे विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति और अधिक सजगता जाग्रत हो।

निष्कर्ष :-

1. विद्यार्थियों की पर्यावरण जागरूकता एवं स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति के मध्य कोई सार्थक सम्बंध नहीं है।
2. छात्र एवं छात्राओं की पर्यावरणीय जागरूकता में सार्थक लिंग भिन्नताएं नहीं हैं।
3. छात्र एवं छात्राओं की स्वच्छ भारत अभियान के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक लिंग भिन्नताएं नहीं हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बघेला, एस.एस. (1994)–पर्यावरण अध्ययन एवं शिक्षण विधियाँ, जयपुर : राजस्थान प्रकाशन, दूसरा संस्करण पृष्ठ संख्या 18–20
2. भार्गव, महेश (1993) आधुनिक मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन, आगरा: पुस्तक प्रकाशन कचहरी घाट, नवीनतम संस्करण, पृष्ठ संख्या : 263–311
3. पॉल, दमयंती (2010). उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में पर्यावरण जागरूकता व पर्यावरण अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन .शोध प्रबंध, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय. जबलपुर.
4. सोनी, बबीता (2004). उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के पर्यावरण मूल्यों एवं पर्यावरण जागरूकता के प्रति अध्ययन.शोध प्रबंध रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय. जबलपुर.
5. त्रिवेदी, आर.एन. एवं शुक्ला, डी.पी. (2001). रिसर्च मैथडोलोजी, जयपुर: कॉलेज बुक डिपो पब्लिकेशन, ग्यारहवाँ संस्करण ,पृष्ठ संख्या: 1–84.

एन.सी.एफ.टी.ई. 2009 द्वारा प्रस्तुत पाठ्यक्रम को स्थानीय भाषा एवं परिवेश से जोड़ने पर विद्यार्थियों पर प्रभाव

श्रीमती किरण मिश्रा*
श्री भूपेन्द्र निगम**

शोध सार

पाठ्यक्रम शिक्षा का आधार है। विद्यार्थी के उचित विकास के लिए यह आवश्यक है कि पाठ्यक्रम बालक की आवश्यकता एवं भाषा के अनुरूप हो। समय-समय पर विभिन्न आयोगों ने इस क्षेत्र में कार्य किया एन.सी.एफ. 2005 ने इस क्षेत्र में विशेष कार्य किया है। विद्यालय शिक्षण में शिक्षकों की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका होती है अतः एन.सी.एफ. टी.ई. (2009) ने शिक्षक प्रशिक्षण को विद्यालय शिक्षण से जोड़ते हुए नया रूप प्रदान किया। भारत में भाषागत विविधता को देखते हुए प्रस्तुत शोध पत्र में एन.सी.एफ.टी.ई. (2009) द्वारा प्रस्तुत बी.एड. पाठ्यक्रम को स्थानीय भाषा एवं परिवेश से जोड़कर विद्यार्थियों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया गया है। अवलोकन एवं क्रिया कलाप से प्राप्त परिणामों के आधार पर पाया गया कि स्थानीय भाषा एवं स्थानीय परिवेश से जोड़ने पर विद्यार्थियों का अधिगम अधिक व रुचिपूर्ण होता है एवं उसमें विकास सम्भव है।

प्रस्तावना-

शिक्षा, प्रत्येक मानव के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति अन्य जीवों से श्रेष्ठ होता है। औपचारिक रूप से शिक्षा प्रदान करने में पाठ्यक्रम का महत्वपूर्ण स्थान होता है। पाठ्यक्रम ही वह साधन है जो विद्यार्थी एवं शिक्षक को जोड़ने का कार्य करता है, एवं मार्गदर्शन प्रदान करता है। विशेषज्ञों के दृष्टिकोण से पाठ्यक्रम विभिन्न प्रकार की जानकारियों तथा कुशलताओं का संग्रह है। भारतीय शिक्षा व्यवस्था में पाठ्यक्रम का अर्थ ज्ञान को बढ़ाने का साधन है।

“पाठ्यक्रम में वे समस्त शैक्षिक अनुभव समाविष्ट होते हैं जो शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए तैयार किए जाते हैं।” —मुनरो

विद्यार्थी हमारे देश का भविष्य है अर्थात् भावी नागरिक हैं। विद्यार्थियों के उचित विकास के लिए विद्यालय स्तर पर एन.सी.एफ. ने एक ऐसे पाठ्यक्रम का निर्माण किया जिससे विद्यार्थी बिना बोझ के शिक्षा प्राप्त करें एवं सभी विद्यार्थियों का विकास हो सके। शिक्षा प्रक्रिया को व्यवस्थित व उन्नत तरीके से चलाने के लिए एवं एन.सी.एफ. के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रशिक्षित शिक्षकों, की आवश्यकता महसूस की गई। विद्यालय एवं शिक्षकों के उद्देश्यों में समरूपता लाने के लिए एन.सी.एफ. टी. ई. 2009 ने अध्यापक प्रशिक्षण के लिए नए पाठ्यक्रम ढांचे का विकास किया जिसका मुख्य उद्देश्य था— ऐसे शिक्षक का निर्माण करना जो मानवीय मूल्यों, व्यावसायिक मूल्यों एवं विभिन्न कौशलों से पूर्ण हो एवं विद्यालय स्तर पर शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति कर सके। इस प्रकार राष्ट्र की उन्नति के लिए विद्यालय एवं अध्यापक शिक्षा में समानान्तर विकास करने का प्रयास किया गया।

शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक है कि सभी विद्यार्थियों का समान विकास किया जा सके, अतः शोधकर्ता ने इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए स्थानीय भाषा के उपयोग को महत्वपूर्ण माना एवं इस क्षेत्र में शोध किया। महाराष्ट्र शोध संस्थान (2011) ने शोध ज्ञान की निर्माणात्मक प्रक्रिया में भौतिक व सामाजिक वातावरण की भूमिका का अध्ययन किया। इस कार्य के लिए मुंबई के शहरी विद्यालय एवं कोंकण के आदिवासी विद्यालय के विद्यार्थियों को लिया गया जिसमें विभिन्न क्रिया-कलाप कराए गए। इस कार्य के अंतर्गत विद्यार्थियों से वनस्पति एवं पशुओं का वर्गीकरण, वनस्पतियों का संग्रह, पौधों से संबंधित चित्रकारी, लेखन कार्य एवं

*सहायक प्राध्यापिका, शिक्षा विभाग संत अलायसियस स्वशासी महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

** सेवानिवृत्त आचार्य, मनोविज्ञान एवं सन्दर्शन महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

विवरणात्मक कार्य कराया। अवलोकन के परिणाम स्वरूप यह पाया गया कि ग्रामीण विद्यार्थी वनस्पति एवं पशुओं के नाम अधिक बताते हैं एवं चित्रकारी में भी अधिक विविधता ला पाते हैं जबकि शहरी बालक इसका विवरण अपेक्षाकृत कम कर पाते हैं। वनस्पतियों के चित्रांकन में भी आदिवासी बालकों में विविधता पाई गई अपितु शहरी बालकों ने केवल बगीचे के पौधों का ही चित्रांकन किया। आदिवासी बालकों में वनस्पति संबंधी ज्ञान अधिक होने का कारण उनका स्थानीय वातावरण से अन्तर्संबंध है। अतः पाठ्यक्रम में स्थानीयता का संबंध स्थापित कर शिक्षण किया जाना चाहिए।

फिलीपिन्स (1994) में भाषागत विविधता के कारण विद्यालयों में अधिगम संबंधी आने वाली कठिनाइयों के अध्ययन के लिए क्रियात्मक अनुसंधान किया गया। इस कार्य में उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए स्थानीय निकायों को स्थानीय आवश्यकता के आधार पर पाठ्यक्रम निर्माण करने की स्वतंत्रता दी गई। इस कार्य का मुख्य उद्देश्य स्थानीय भाषा द्वारा मानक विषयवस्तु को विद्यार्थियों तक पहुँचाना था। अध्यापन कार्य में स्थानीय भाषा का उपयोग करने पर यह पाया गया कि इससे विद्यार्थी विषयवस्तु को अधिक ग्रहण करते हैं। अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि कठिन एवं जटिल विषयों को समझाने में स्थानीय भाषा के उपयोग द्वारा विद्यार्थियों के अधिगम स्तर में वृद्धि होती है एवं वह रुचिपूर्वक सीखता है।

भारत विविधताओं का देश है यहाँ विभिन्न स्थानों में भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोली जाती हैं। भाषागत विविधता के कारण विद्यार्थियों के समझ के स्तर में भी विभिन्नता पाई जाती है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों को विषय सामग्री समझाना है एवं उसकी उपयोगिता बताना है। प्रत्येक विद्यार्थी में अपनी एक विशिष्टता होती है। यदि सभी को एक ही साँचे में ढालने का प्रयास किया जाए तो सम्भव है कि शिक्षा के उद्देश्य की पूर्ति कर पाना एक जटिल कार्य होगा। स्थानीय विविधताओं के अनुसार यदि शिक्षण कार्य में स्थानीय आवश्यकता को ध्यान में रखकर शिक्षण कार्य किया जाए तो शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति की जा सकती है। भारत एक विकासशील देश है, जहाँ शिक्षा को विद्यार्थी के समझ के स्तर तक पहुँचाना आवश्यक है। आवश्यकता इस बात की है कि समय एवं स्थान की आवश्यकता के अनुरूप शिक्षण को सरल एवं सुलभ बनाया जाए जिससे शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति हो सके। जॉन डीवी ने कहा भी है "पाठ्यक्रम को लचीला व विद्यार्थी के जीवन में जोड़ने वाला होना चाहिए" अर्थात् विद्यार्थियों की भाषा एवं परिवेश से संबंधित होना चाहिए।

उद्देश्य:-

शोध कार्य के लिए निम्न उद्देश्यों को निर्धारित किया गया है-

1. एन.सी.एफ.टी.ई. (2009) द्वारा प्रस्तुत पाठ्यक्रम को स्थानीय भाषा से जोड़ने में विद्यार्थियों पर प्रभाव का अध्ययन।
2. एन.सी.एफ.टी.ई. (2009) द्वारा प्रस्तुत पाठ्यक्रम को स्थानीय परिवेश से जोड़ने में विद्यार्थियों पर प्रभाव का अध्ययन।

परिकल्पनाएँ:-

परिकल्पना किसी समस्या का अनुमानित समाधान है। अतः निम्न परिकल्पनाएँ बनाई गई-

1. स्थानीय भाषा के प्रयोग से विद्यार्थियों के अधिगम पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
2. स्थानीय परिवेश से जोड़कर शिक्षण करने पर विद्यार्थियों के अधिगम पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

न्यादर्श :- अवलोकन कार्य हेतु 5 विद्यालयों को लिया गया।

उपकरण :-

आँकड़ों के एकत्रीकरण के लिए विद्यालयों में सहभागी अवलोकन के अंतर्गत विभिन्न क्रिया-कलाप कराए गए ।

शोध विधि :- प्रस्तुत शोधकार्य में आँकड़ों के एकत्रीकरण के लिए शोधकर्ता द्वारा यादृच्छिक विधि से 5 ग्रामीण विद्यालयों का चुनाव किया गया। अवलोकन कार्य हेतु स्थानीय भाषा एवं परिवेश को ध्यान में रखकर विभिन्न क्रिया-कलाप कराये गए एवं विद्यार्थियों की प्रतिक्रियाओं का अवलोकन किया गया।

विभिन्न प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण कर परिणामों की व्याख्या की गई एवं शोध निष्कर्ष प्राप्त किये गए।

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या :- प्रस्तुत शोध कार्य हेतु आँकड़ों के आधार पर परिणामों का विश्लेषण निम्नानुसार किया गया है -

अवलोकन संबंधी तालिका

क्रं.	क्रियाकलाप	स्थानीय भाषा में अभिव्यक्ति	सामान्य भाषा में अभिव्यक्ति
1.	वनस्पतियों के नाम संबंधी क्रिया-कलाप	सुगम अभिव्यक्ति	सामान्य
2.	शब्द रूपान्तरण संबंधी क्रिया-कलाप	अधिक	सामान्य
3.	शिक्षण संबंधी क्रिया-कलाप	अधिगम तीव्र	सामान्य
4.	चित्रों पर आधारित कहानी लेखन	सुगम अभिव्यक्ति	सामान्य
5.	वैज्ञानिक सिद्धांत संबंधी क्रिया-कलाप	रुचिपूर्वक अभिव्यक्ति	सामान्य (जटिल अभिव्यक्ति)

आँकड़ों के एकत्रीकरण के लिए अवलोकन कार्य किया गया जिसमें क्रिया-कलाप 1 में यह पाया कि दो समूहों में से जिस समूह ने स्थानीय शब्दों का प्रयोग कर अभिव्यक्ति की वे अधिक सुगमता से अपने अनुभवों को व्यक्त कर सके। क्रिया-कलाप-2 में यह पाया गया कि बालक जब पुस्तकीय सामग्री को स्वयं की भाषा या स्थानीय भाषा में प्रस्तुत करता है तो वह कार्य करने में रुचि का अनुभव करता है एवं अधिक आत्मविश्वास के साथ प्रस्तुतीकरण करता है। क्रिया-कलाप-3 में जब शिक्षक ने विशिष्ट एवं तकनीकी भाषा का प्रयोग किया तो विद्यार्थियों से दूरी अनुभव की किंतु जब स्थानीय उदाहरणों एवं स्थानीय भाषा का प्रयोग कर शिक्षण किया गया तो विद्यार्थियों ने सुखद वातावरण में अधिक सीखा। क्रिया-कलाप-4 द्वारा यह प्रदर्शित होता है कि चित्रों को देखकर विद्यार्थियों ने स्वयं की भाषा (स्थानीय भाषा) में अधिक स्पष्ट अभिव्यक्ति दी एवं कहानी का निर्माण किया। जबकि विशिष्ट हिन्दी में अभिव्यक्ति कार्य में जटिलता अनुभव की गई। क्रिया-कलाप-5 द्वारा यह प्रदर्शित होता है कि वैज्ञानिक नियमों एवं सिद्धांतों को समझने में जब शिक्षकों ने स्थानीय अथवा दैनिक जीवन संबंधी उदाहरणों का प्रयोग किया तो विद्यार्थियों ने अधिक रोचकता से सीखा एवं उनके आत्मविश्वास में वृद्धि हुई।

क्रिया-कलाप-1,3 व 4 यह प्रदर्शित करते हैं कि स्थानीय भाषा का उपयोग किए जाने पर विद्यार्थी अधिक सहजता से सीखता है एवं उसके अधिगम पर धनात्मक प्रभाव पड़ता है अतः परिकल्पना "स्थानीय भाषा के प्रयोग से विद्यार्थियों के अधिगम पर

कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता” सत्यापित नहीं होती है।

क्रिया-कलाप- 2 व 5 से यह स्पष्ट होता है कि जब विद्यार्थियों को उनके वातावरण से जोड़कर पढ़ाया जाता है एवं दैनिक व स्थानीय उदाहरणों का उपयोग किया जाता है तो वह अधिक रुचिपूर्ण ढंग से सीखता है। अतः परिकल्पना “स्थानीय परिवेश से जोड़कर शिक्षण करने में विद्यार्थियों के अधिगम पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता” सत्यापित नहीं होती।

निष्कर्ष-

आँकड़ों से प्राप्त परिणामों का विश्लेषण कर यह निष्कर्ष निकलता है कि-

- (1) जब विद्यार्थियों के मध्य स्थानीय भाषा का उपयोग किया जाता है तो वह अधिक सहजता से सीखता है।
- (2) जब शिक्षण कार्य में स्थानीय शब्द एवं उदाहरणों का प्रयोग किया जाता है तो विद्यार्थी के अधिगम स्तर में वृद्धि होती है एवं उनमें आत्मविश्वास बढ़ता है। अतः शिक्षण कार्य के दौरान स्थानीय शब्दों का प्रयोग एवं स्थानीय परिवेश से जोड़कर पढ़ाने में अधिक अच्छे परिणाम प्राप्त होते हैं।

संदर्भ ग्रंथ -

- Krishna Kumar (1987), Curriculum, Psychology and Society. *Economic and Political Weekly*, vol XXII, No12, PP507.
- National Curriculum Framework for Teacher Education, NCTE Document 2009-10, secretary NCTE, Document Press, New Delhi.
- Osuji, S.N. (2009), Teacher Education Curriculum in Nigeria in the Presentive of life long education, *The Journal of International Social Research*, Vol 2/8.
- राय, पारसनाथ, राय सी.पी. (2011) अनुसंधान परिचय, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, पृ. 95-96।
- शर्मा, आर.ए. चतुर्वेदी शिखा, (2005) अध्यापक प्रशिक्षण का विकास, सूर्या पब्लिकेशन, आर लाल बुक डिपो, पृ.9।
- शर्मा, ओ.पी., सिंह रामपाल (2008) शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पृ. 146-150।
- सोनी, राम गोपाल (1998) उदयोन्मुख भारतीय समाज में शिक्षा के नए आयाम, एच.पी. भार्गव बुक हाउस, प्रथम संस्करण, पृ. 4।
- यादव, सियाराम, (1998) पाठ्यक्रम विकास, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, नवीनतम संस्करण, पृ. 4।

पुनर्वास केन्द्र में भर्ती कुपोषित बच्चों का स्वास्थ्य परीक्षण एवं उन पर
आहारिय प्रबंधन का प्रभाव

कु. राबिया बेगम*
डॉ. (श्रीमती) ममता शर्मा**

शोध सार

बच्चों में कुपोषण एक विश्व व्यापी गंभीर समस्या है। भारत में गंभीर रूप से कुपोषित बच्चों का प्रतिशत 6.4 प्रतिशत है तथा उनकी संख्या लगभग 81 लाख है। मध्यप्रदेश में पांच वर्ष से कम बच्चों में 50 प्रतिशत बच्चे ठिगने कद के 60 प्रतिशत बच्चे कम वजन के तथा 35 प्रतिशत बच्चे कम लंबाई के पाए गये। (MFHS-3) कुपोषण दूर करने में पोषण पुनर्वास केन्द्रों की भूमिका इतनी महत्वपूर्ण है कि यह विषय को शोध परक बनाती है। आहारिय प्रबंधन द्वारा बच्चों में वजन की बढ़ोत्तरी आनुपातिक रूप में लंबाई व बाँह की गोलाई में सकारात्मक प्रभाव देखा गया। यह सरकारी योजना अत्यंत महत्वपूर्ण है जो माँ व बच्चों का स्वास्थ्य रखने में सक्षम है तथा प्रशिक्षण द्वारा ज्ञान व जागरूकता को बढ़ाती है।

प्रस्तावना—

कुपोषण एक सामान्य शब्द है जो असंतुलित या अपर्याप्त मात्रा में आहार लेने के कारण चिकित्सीय स्थितियों में प्रयोग किया जाता है। अधिकांशतः ये खराब अवशोषण या पोषण तत्वों के अत्यधिक क्षरण से उत्पन्न अल्प पोषण को प्रदर्शित करता है। कुपोषण का अनुभव तब होता है जब उचित मात्रा में गुणवत्ता वाले आहार की लंबे समय से सेवन न किया जा रहा हो।

आंकड़ें बताते हैं कि भारत में गंभीर रूप से कुपोषित बच्चों का प्रतिशत 6.4 है तथा उनकी संख्या लगभग 81 लाख है। पाया गया है मध्यप्रदेश में पांच वर्ष से कम बच्चों में 50 प्रतिशत बच्चे में ठिगना कद पाया गया, 60 प्रतिशत बच्चों का वजन कम था, एवं 35 प्रतिशत बच्चों लंबाई के अनुपात में दुबले पतले थे। पांच वर्ष तक होने वाले कुपोषण एवं और उनसे होने वाली मृत्यु से बचाव हेतु एन.आर.सी. की भूमिका विषय पर शोध प्रस्तुत किया। यह शोध उड़ीसा क्षेत्र के 200 बच्चों पर किया गया जो एन.आर.सी. में भर्ती थे। उनके अनुसार 75 प्रतिशत बच्चों में मृत्यु का कारण कुपोषण था।

परभार, निरजंन ने "बच्चों में होने वाले कुपोषण एवं एनीमिया के बचाव में पोषण पुनर्वास केन्द्र की भूमिका" विषय पर शोध प्रस्तुत किया। उनके अनुसार 250 कुपोषित बच्चों में से 20 प्रतिशत मध्य, 48 प्रतिशत औसत एवं 32 प्रतिशत बच्चे गंभीर रूप से कुपोषित पाये गये।

मध्यप्रदेश ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन द्वारा बाल शक्ति योजना के अंतर्गत 258 पोषण पुनर्वास केन्द्र चलाये जा रहे हैं जो बच्चों के आहार में प्रोटीन, ऊर्जा व पोषक तत्वों के आहारिय प्रबंधन पर कार्य कर रहे हैं। गुप्ता, रिचा (2015) ने शोध मध्यप्रदेश के खंडवा व बालाघाट जिला चिकित्सालय के पोषण पुनर्वास केन्द्र में भर्ती बच्चों पर किया। इस शोध में बच्चों के कुपोषण पर आहार द्वारा निदान प्रस्तुत किया गया है।

राजीव दास के शोध से स्पष्ट है कि मध्यप्रदेश में बच्चों में कुपोषण एक गंभीर स्थिति उत्पन्न करता है जिससे मृत्युदर के प्रतिशत में लगातार वृद्धि हो रही है। भारत की 75 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है जिनका प्रमुख रोजगार कृषि व

* शोध छात्रा, गृह विज्ञान, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

** प्राध्यापक, मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य (स्वशासी) महाविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

मजदूरी है। ऐसे परिवारों की आर्थिक, सामाजिक स्थिति कमजोर है। ऐसी स्थिति में पोषण पुनर्वास केन्द्रों की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता।

उद्देश्य –

1. पोषण पुनर्वास केन्द्र में भर्ती कुपोषित बच्चों का स्वास्थ्य परीक्षण एवं उन पर आहारिय प्रबंधन के प्रभाव का अध्ययन।

परिकल्पनाएँ –

1. पोषण पुनर्वास केन्द्र में भर्ती बच्चों के स्वास्थ्य पर आहारिय प्रबंधन का सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

शोध प्रविधि –

इस शोध हेतु दमोह जिले के ग्राम बटियागढ़ में स्थित पोषण पुनर्वास केन्द्र में भर्ती 40 बच्चों को न्यादर्श के रूप में लिया गया है।

शोध सीमायें :-

1. यह शोध मात्र 40 बच्चों के न्यादर्श पर आधारित है जिसमें बालक व बालिकाएँ सम्मिलित हैं।
2. यह शोध दमोह जिले के बटियागढ़ ग्राम में स्थित पोषण पुनर्वास केन्द्र पर आधारित है।
3. कुपोषण की स्थिति में केवल बच्चों के वजन को सम्मिलित किया गया है।

मध्यप्रदेश में गंभीर रूप से कुपोषित बच्चों हेतु मध्यप्रदेश राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन का जिला चिकित्सालयों के सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों में पोषण पुनर्वास केन्द्र का संचालन व क्रियान्वयन किया जा रहा है। आँगनबाड़ी कार्यकर्ताओं द्वारा गंभीर रूप से कुपोषित बच्चों की पहचान की जाती है और उन्हें इन केन्द्रों में भेजा जाता है। वार्ड में भर्ती बच्चों को आहारिय प्रबंधन के साथ-साथ माताओं को प्रबंधन का प्रशिक्षण भी दिया जाता है। इस काल में बच्चों का पूर्व में वजन, कद, बाँह की गोलाई का माप लिया जाता है तथा पश्चात् भी परीक्षण का लेखा-जोखा रखा जाता है।

इन केन्द्रों में बच्चों को कुपोषण की श्रेणी के अनुसार रखा जाता है—

<-3SD<-3SD- कुपोषित

<-4SD<-4SD- गंभीर कुपोषित

इन श्रेणियों के अनुसार बच्चों को दूध, तेल, व शक्कर का मिश्रण एवं मूंगफली, नारियल तेल व दूध पावडर का मिश्रण जो भूख परीक्षण (Appetite Test) के परिणामों के आधार पर बच्चों को दिया जाता है।

इन पोषण पुनर्वास केन्द्रों में एन्थ्रोप्रोमेट्रिक टेस्ट के अंतर्गत निम्न परीक्षण किए जाते हैं— (1) वजन (2) ऊँचाई के अनुसार वजन (3) ऊपरी बाँह की मध्य गोलाई का माप (4) भूख का परीक्षण।

परिणाम आंकड़ों का विश्लेषण :-

सारणी क्रमांक-1

पोषण पुनर्वास केन्द्र में भर्ती बच्चों के भर्ती एवं छुट्टी के समय वजन संबंधी तुलनात्मक परिणाम

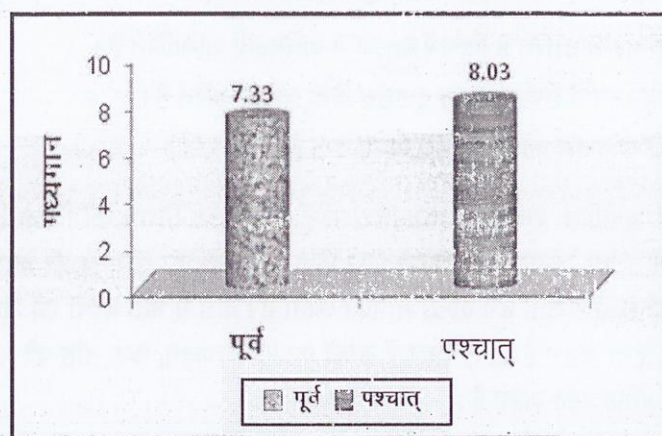
भर्ती के	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
पूर्व	40	7.33	1.02	2.69	<0.01
पश्चात्	40	8.03	1.24		

स्वतंत्रता के अंश-78

स्तर पर सार्थकता हेतु मान 0.05-1.99

स्तर पर सार्थकता हेतु मान 0.01-2.64

आंकड़ों का ग्राफीय निरूपण



उपरोक्त सारणी में प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट होता है कि पोषण पुनर्वास केन्द्र में भर्ती बच्चों पर आहारिय प्रबंधन का सार्थक प्रभाव पड़ता है। भर्ती के समय बच्चों का औसत वजन 7.33 किलो ग्राम था जो छुट्टी के पश्चात् 8.03 किलो ग्राम हो गया। वजन के अनुसार लंबाई व बाँह की गोलाई में बढ़ोत्तरी पाई गई अर्थात् शासन द्वारा कुपोषित बच्चों हेतु चलाये जा रहे पोषण कार्यक्रमों का सकारात्मक परिणाम प्राप्त हो रहा है। स्पष्ट है कि पोषण पुनर्वास केन्द्र में भर्ती बच्चे भर्ती किए जाते हैं वे सामान्य तौर पर निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के होते हैं। परिवार में स्वच्छता का स्तर भी निम्न होता है जिससे बार-बार संक्रमण होने से बच्चे बीमारी का शिकार हो जाते हैं। दूसरी ओर पोषण पुनर्वास केन्द्रों में बच्चों को पूर्व निर्धारित समय पर आहार दिया जाता है और यह कार्यकर्ताओं के निरीक्षण में होता है। उनकी साफ-सफाई व स्वच्छता पर विशेष ध्यान दिया जाता है। महत्वपूर्ण बिन्दु यह है कि बच्चों की माताओं को भी आहार संबंधी ज्ञान दिया जाता है तथा प्रशिक्षण द्वारा उन्हें जागरूक बनाया जाता है ताकि वे घर जाकर बच्चों का ध्यान रख सकें। "माँ स्वस्थ तो बच्चा स्वस्थ" इस कथन को सार्थकता प्रदान की जाती है।

निष्कर्ष-

कुपोषित बच्चों के स्वास्थ्य पर आहार प्रबंधन का सार्थक प्रभाव पड़ता है।

सुझाव—

1. ग्रामीण क्षेत्रीय परिवारों को पोषण पुनर्वास केन्द्रों का भरपूर लाभ उठाना चाहिये।
2. इस कार्यक्रम को आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं द्वारा जन-जन तक पहुँचाया जाए।
3. जन जागरण हेतु दृश्य व श्रव्य साधनों का प्रयोग किया जा सकता है।
4. जागृति ही हर समस्या का समाधान है जो ज्ञान के द्वारा ही सचेत हो सकती है एवं कुपोषण पर विजय प्राप्त कर बाल मृत्यु दर कम की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ —

- चौधरी.सी.एम. (1998) अनुसंधान विधियाँ, जयपुर, सबलाइम पब्लिकेशन, प्रथम संस्करण, पृ. सं. 76-88
- गुप्ता, रिचा एवं शर्मा, बालकृष्ण (2015) बच्चों में होने वाला कुपोषण एवं एनीमिया के बचाव में पोषण पुनर्वास केन्द्र की भूमिका, इंटरनेट मेटर।
- नायडू, बी.आर. एवं अन्य (2014)— गंभीर कुपोषित बच्चों का संस्थागत प्रबंधन, भोपाल, नेशनल हेल्थ मिशन, मध्यप्रदेश, प्रथम संस्करण।
- परमार, निरंजन, पांच वर्ष तक के बच्चों में होने वाले कुपोषण और उनसे होने वाली मृत्यु से बचाव में एन.आर.सी. की भूमिका, इंटरनेट मेटर।

क्रिया-कलाप आधारित अधिगम (ए.बी.एल.) का विद्यार्थियों की शैक्षणिक चिन्ता पर प्रभाव

श्रीमती रश्मि श्रीवास्तव*
डॉ. सी.भसीन**

शोध सार

क्रिया-कलाप आधारित अधिगम शिक्षण की नई विधि है प्रस्तुत शोध कार्य का मुख्य उद्देश्य क्रिया-कलाप आधारित अधिगम विद्यालय के विद्यार्थियों की शैक्षणिक चिन्ता की तुलना परम्परागत शिक्षण विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों से करना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये प्रयोगात्मक विधि का उपयोग किया गया है। न्यादर्श स्वरूप कक्षा पांचवीं के 400 विद्यार्थियों को चयनित किया गया है। निष्कर्षतः क्रिया-कलाप आधारित अधिगम वाले छात्र, छात्राओं की शैक्षणिक चिन्ता परम्परागत शिक्षण विधि के छात्र छात्राओं की अपेक्षा कम पायी गयी।

सरकार द्वारा किये जा रहे अनेक प्रयासों के बाद भी नन्हें मुन्नों के पढ़ाई के बोझ में कोई कमी नहीं आयी है। अधिकांश प्राथमिक विद्यालयों में परम्परागत शैली में पढ़ाया जाता है। विभिन्न विषयों को लेकर बच्चे परेशान होते हैं उनकी समस्याओं का समाधान नहीं हो पाता है और बच्चे शैक्षणिक चिन्ता का शिकार हो जाते हैं एवं समस्यात्मक व्यवहार करने लगते हैं। क्रिया-कलाप आधारित अधिगम में विद्यार्थी पाठ्य वस्तु को क्रिया-कलापों और शिक्षण सहायक सामग्री की सहायता से भयमुक्त वातावरण में सहजता से सीखते हैं एवं उनमें शैक्षणिक चिन्ता कम होती है। तुला, एफ. (2012) ने कक्षा पांचवीं, छठवीं, सातवीं, और आठवीं स्तर के विद्यार्थियों की गणित विषय के लिये चिन्ता और शैक्षणिक उपलब्धि के संबंध में अध्ययन किया और पाया कि शैक्षणिक चिन्ता और शैक्षणिक उपलब्धि में नकारात्मक संबंध होता है। हेमामालिनी, एच.सी. (2011) ने मैसूर शहर के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों की चिन्ता और शैक्षणिक उपलब्धि का अध्ययन किया और पाया कि चिन्ता, शैक्षणिक उपलब्धि को प्रभावित करती है। इस प्रकार अनुसंधानों से स्पष्ट होता है कि क्रिया-कलाप शैक्षणिक चिन्ता शैक्षणिक उपलब्धि को कम करती है। प्रस्तुत शोधकार्य में यह जानने का प्रयास किया गया, कि क्या क्रिया कलाप आधारित अधिगम विद्यार्थियों की शैक्षणिक चिन्ता को कम करता है?

यदि क्रिया-कलाप आधारित अधिगम शैक्षणिक चिन्ता को प्रभावित करता है तो शिक्षकों को तदानुसार सुझाव दिये जा सकेंगे कि वे उन सभी पाठ्य अंशों को जो क्रिया-कलाप के आधार पर बढ़ाये जा सकते हैं, इस विधि का समावेश करने का प्रयास करें जिससे विद्यार्थियों की शैक्षणिक चिन्ता कम होना उनकी उपलब्धि बढ़ सके।

तालिका न्यादर्श सारणी

विद्यालय की प्रकृति	संख्या		कुल संख्या
	छात्र	छात्रा	
परम्परागत शिक्षण	100	100	200
क्रिया-कलाप आधारित अधिगम	100	100	200
योग	200	200	400

उपकरण : शैक्षणिक चिन्ता मापनी : डॉ.ए.के.सिंह एवं डॉ. कुमारी ए.सेन गुप्ता द्वारा निर्मित

* शोध छात्रा शिक्षा संकाय रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

** पूर्व रीडर, शास.शिक्षा महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्यातालिका क्रं.2

परम्परागत शिक्षण समूह के छात्र, छात्रा एवं विद्यार्थियों की शैक्षणिक चिन्ता संबंधी परिणाम

समूह	परीक्षण स्थिति	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
छात्र	पूर्व	100	10.16	2.24	1.24	>0.05
	पश्च	100	9.75	2.50		
छात्राएँ	पूर्व	100	10.72	2.64	1.55	>0.05
	पश्च	100	10.19	2.47		
विद्यार्थी	पूर्व	200	10.44	2.46	1.95	>0.05
	छात्र+छात्रा	पश्च	200	9.97		

स्वतंत्रता के अंश 198, 398

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 1.98, 1.97

0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.60, 2.59

उपरोक्त तालिका क्रं.2 में प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट है कि परम्परागत शिक्षण विधि से अध्यापन से छात्र, छात्रा एवं विद्यार्थियों की शैक्षणिक चिन्ता के पूर्व एवं पश्च परीक्षणों के मध्य सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक अंतर नहीं है अर्थात् परम्परागत शिक्षण विधि के अध्यापन से छात्र, छात्रा एवं विद्यार्थियों की शैक्षणिक चिन्ता पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं होता है।

तालिका क्रमांक –3

क्रिया-कलाप आधारित अधिगम के छात्र, छात्रा एवं विद्यार्थियों की शैक्षणिक चिन्ता संबंधी परिणाम

समूह	परीक्षण स्थिति	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
छात्र	पूर्व	100	10.17	2.99	8.41	<0.01
	पश्च	100	6.72	2.82		
छात्राएँ	पूर्व	100	10.42	3.18	10.80	<0.01
	पश्च	100	5.99	2.76		
विद्यार्थी	पूर्व	200	10.30	3.08	13.58	<0.01
	पश्च	200	6.36	2.81		

स्वतंत्रता के अंश 198, 398

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 1.98, 1.97

0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.60, 2.59

तालिका क्र.3 के आधार पर स्पष्ट है कि क्रिया-कलाप आधारित अधिगम विधि से अध्यापन में छात्र, छात्रा, विद्यार्थियों की शैक्षणिक चिन्ता के पश्च परीक्षणों के प्राप्तांक पूर्व परीक्षणों के प्राप्तांकों की अपेक्षा कम प्राप्त हुए अर्थात् क्रिया-कलाप आधारित अधिगम विधि के अध्ययन से छात्र, छात्रा एवं विद्यार्थियों की शैक्षणिक चिन्ता कम हुई है।

क्रिया-कलाप आधारित अधिगम बहुकेन्द्रित अनुदेशन के सिद्धांतों पर आधारित है जिसमें सभी ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रियों का उपयोग होता है, जिसके कारण अधिगम शीघ्रता से, सरलता से और स्थायी होता है। क्रिया-कलाप आधारित अधिगम विधि में सभी कक्षा में सभी क्रियाओं में सक्रिय रूप से सम्मिलित रहते हैं। विद्यार्थियों में गहन चिन्तन विकसित करने के लिये उन्हें सक्रिय रखा जाता है जिससे उनमें विषय वस्तु से संबंधित संप्रत्यय न केवल अधिक स्पष्ट होते हैं वरन् विद्यार्थी द्वारा अर्जित ज्ञान का प्रभावशाली तरीके से उपयोग किया जा सकता है। छात्र सहभागिता से शिक्षण कार्यपूर्ण होने के फलस्वरूप विद्यार्थियों के आत्मविश्वास में भी वृद्धि होती है। विषयवस्तु स्पष्टता और सरलता से समझ में आती है फलस्वरूप शैक्षणिक उपलब्धि बढ़ जाती है। योग्यतानुरूप शैक्षणिक उपलब्धि प्राप्त करने से शैक्षणिक चिन्ता कम हो जाती है। एफ.तुला (2012) ने पांचवीं, छठवीं, सातवीं और आठवीं स्तर के विद्यार्थियों की गणित विषय के लिये चिन्ता और शैक्षणिक उपलब्धि के मध्य संबंध में पाया कि विद्यार्थियों की गणित विषय की चिन्ता और शैक्षणिक उपलब्धि में नकारात्मक संबंध होता है। शैक्षिक चिन्ता के कम होने से शैक्षणिक उपलब्धि बढ़ जाती है। इसी प्रकार गर्ग. जी. (2011) ने पाया कि जैसे जैसे शैक्षणिक चिन्ता बढ़ती है शैक्षणिक उपलब्धि कम होती है। परम्परागत शिक्षण विधि प्रमुखतः शिक्षक केन्द्रित होती है। शिक्षक पाठ्यवस्तु का निर्धारण पाठ्यक्रम के अनुसार करते हैं और उनकी विवशता रहती है कि उसे समय पर पूर्ण किया जाय। अतः कई बार इच्छा होते हुए भी वे अन्य विधियों का समावेश नहीं कर पाते हैं। विद्यार्थियों की आवश्यकताओं और रुचियों पर ध्यान नहीं दिया जाता है। छात्र सिर्फ सूचना ग्रहण करते हैं शिक्षक शिक्षार्थी अंतः क्रिया समाप्त हो जाती है। विद्यार्थियों को स्वतंत्र रूप से अपनी शंकाओं को दूर करने के अवसर नहीं दिये जाते हैं। परीक्षा का भय विद्यार्थियों की शैक्षणिक चिन्ता का कारण बनता है।

निष्कर्ष :

- (1) शैक्षणिक चिन्ता पर परम्परागत शिक्षण विधि का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है शैक्षणिक चिन्ता के पश्च परीक्षण के प्राप्तांकों और पूर्व परीक्षण के प्राप्तांकों के मध्य सार्थक अंतर नहीं है।
- (2) क्रिया-कलाप आधारित अधिगम समूह का छात्र, छात्रा विद्यार्थियों की शैक्षणिक चिन्ता पर सार्थक प्रभाव पड़ा है क्योंकि शैक्षणिक चिन्ता के पश्च परीक्षण प्राप्तांक, पूर्व परीक्षण के प्राप्तांकों की तुलना में कम प्राप्त हुए हैं अर्थात् क्रिया-कलाप आधारित अधिगम के अध्यापन से छात्र, छात्रा और विद्यार्थियों की शैक्षणिक चिन्ता कम हो गई।

संदर्भ :-

- अस्थाना, विपिन, श्रीवास्तव, विजया एवं अस्थाना, निधि (2008-09) शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन पृ.सं. 1-25
- गैरेट हैनरी, ई (1959) "शिक्षा मनोविज्ञान में सांख्यिकी के प्रयोग" ग्यारहवें संस्करण लुधियाना कल्याणी पब्लिशर्स
- कपिल एच.के.(2010) "सांख्यिकी के मूल तत्व" दशम संस्करण आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन
- माथुर डॉ.एस.एन.(2008) "शिक्षण कला" नवीन संस्करण विनोद पुस्तक मंदिर आगरा क्रिया-कलाप आधारित अधिगम शिक्षक निर्देश पुस्तिका
- H.C. Hemamlini (2011) Anxiety and academic Achievement of High School Students of Mysore City
- Journal of Community Guidance and Research Vol.28 No.1 P-94-98 ISSN -9701346
- Tula, F.(2012) An Examination on Relation between mathematics Anxiety and Achievements of fifth grade, Sixth grade, Seventh grade and Eighth grade students" International Mathematical Farm Vol. 7 No 60 P 2987-2994
- Garg, G.(2011) Academic Anxiety and life skills of secondary school children, Journal of Community Guidance and Research, Vol. 28, No.3 ISSN 0970-1346, P-465-475

बालिका शिक्षा की प्रगति के लिए बालिका छात्रावास योजना के अंतर्गत बालिकाओं की विद्यालय में नामांकन स्थिति, ठहराव स्थिति एवं शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन : जबलपुर जिले के संदर्भ में

* डॉ. रीना जैन

शोध सार

प्रस्तुत शोध पत्र में बालिका शिक्षा की प्रगति के लिए बालिका छात्रावास योजना के अंतर्गत बालिकाओं की विद्यालय में नामांकन स्थिति, ठहराव स्थिति एवं शैक्षिक उपलब्धि के संदर्भ में प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषणात्मक अध्ययन उद्देश्य था। न्यादर्श के रूप में जिला जबलपुर के समस्त विकासखंडों—कुण्डम, शहपुरा, सिहोरा, पनागर, मझौली, जबलपुर ग्रामीण में संचालित समस्त 06 बालिका छात्रावासों के बालिका विद्यालयों का चयन किया गया। उपकरण के रूप में जिला शिक्षा केन्द्र जबलपुर से प्राप्त आंकड़ों एवं शालेय अभिलेख का प्रयोग किया गया। प्राप्त निष्कर्ष के अनुसार बालिकाओं की विद्यालय में नामांकन स्थिति, ठहराव स्थिति और शैक्षिक उपलब्धि में निरंतर प्रगति पायी गयी।

प्रस्तावना

बालिका शिक्षा भारत की ही नहीं विश्व की भी एक गहरी समस्या है। यूनिसेफ की हर वर्ष निकलने वाली रिपोर्ट में यह अंकित भी किया गया है। शिक्षा केवल शिक्षित ही नहीं करती, वह अनेक कार्य करती है। बालिका शिक्षा का सर्वाधिक महत्व इसलिए भी है कि यदि नारी शिक्षित है तो वह विकास का ऐसा मार्ग प्रशस्त कर देती है, जिस पर चलकर अनेक समस्याएँ समाप्त होकर संसार की तस्वीर बदल सकती है। संसार के सभी देशों में अनेक योजनाओं के बावजूद लड़के लड़कियों के बीच समानता अब भी बहुत दूर की बात है और शिक्षा के क्षेत्र में बालिकाएं लगातार पिछड़ रही हैं। सबके लिए समान शिक्षा, इस सपने को पूरा करने के लिए यथार्थ का सामना आवश्यक है।

महिलाओं के लिए समानताओं की दिशा में सबसे आवश्यक कदम यह है कि शिक्षा के मामले में लड़के-लड़कियों के बीच समानता की स्थापना की जाए। इस समानता को प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर दूर करने के लिए अनेक योजनाएँ हैं।

बालक और बालिका के बीच भेदभाव की जड़े भारत में ही नहीं कई देशों की सामाजिक व सांस्कृतिक मान्यताओं में गहरी जमीं हुई है समानता के लक्ष्य से इस कठिन उगार को गंभीर प्रयत्नों से अवश्य ही पाया जा सकता है।

सर्व शिक्षा अभियान के अंतर्गत संयुक्त राष्ट्र ने बालिका शिक्षा की पहल की है जिससे कि बालिकाओं के लिए शिक्षा की गुणवत्ता व उपलब्धता के लिए निरंतर राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एक अभियान चलाया जा सकें।

आज संसार में सबसे अधिक आवश्यकता इस बात की है कि सभी इस व्यापक तथ्य को मान्यता दें कि शिक्षित महिला अपने देश के विकास में कितना योगदान कर सकती है। यह आवश्यक है कि लड़कियों को विद्यालय जाने से रोकने वाली बाधाओं को दूर किया जाए। बालक और बालिकाओं की आज सभी ने यह स्वीकार कर लिया है कि शिक्षा एक तात्कालिक प्राथमिकता है। साथ ही सबके लिए समान शिक्षा ने बालक-बालिकाओं को स्कूल के प्रति आकर्षित करने, पढ़ाई जारी रखने के लिए अपने संसाधनों का पुनः निर्धारण कर लिया है। इसका अर्थ यह है कि सभी ने विकास को समर्थन देने के अपने संकल्प को पूरा किया है। अध्ययन बताते हैं कि सुविधाओं की उपलब्धता सीखने सिखाने के वातावरण को उन्नत करने, विद्यार्थियों के उपलब्धि स्तर तथा उनके गुणात्मक सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। (गोविंदा, आर. एवं वर्गीस एन. व्ही., 1991), (अयुब मोहम्मद एवं अली, 2011)। साथ ही शोध करने वालों ने एक के बाद एक अध्ययनों में लड़कियों को शिक्षित करने का सामाजिक मोल साबित कर दिया है। विश्व संदर्भ में बालिका शिक्षा की स्थितियाँ प्राथमिक शिक्षा से अधिक जुड़ी हैं। इस दिशा में युद्ध स्तर पर प्रयास से ही

*व्याख्याता, प्रगत शैक्षिक अध्ययन संस्थान (IASE) जबलपुर (म.प्र.)

सफलता मिल सकती है। प्रस्तुत शोध में शासन द्वारा संचालित बालिका छात्रावास की सुविधा से बालिकाओं के नामांकन, ठहराव एवं शैक्षिक उपलब्धि का विश्लेषण कर योजना के लाभ बालिकाओं की शैक्षिक प्रगति में कितने सहायक है, का अध्ययन किया गया है।

उद्देश्य:-

बालिका शिक्षा की प्रगति के लिए बालिका छात्रावास योजना के अंतर्गत बालिकाओं की विद्यालय में नामांकन स्थिति, ठहराव स्थिति और शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन।

परिकल्पना:-

1. योजना के अंतर्गत बालिकाओं की विद्यालय में नामांकन स्थिति में निरंतर प्रगति हुई है।
2. योजना के अंतर्गत बालिकाओं की विद्यालय में ठहराव स्थिति में निरंतर प्रगति हुई है।
3. योजना के अंतर्गत बालिकाओं की विद्यालय में शैक्षिक उपलब्धि में निरंतर वृद्धि हुई है।

शोधकार्य की योजना -

जिला जबलपुर के समस्त विकासखंडों कुण्डम, शहपुरा, सिहोरा, पनागर, मझौली, जबलपुर ग्रामीण में संचालित समस्त 06 बालिका छात्रावासों के शालेय अभिलेखों के आधार पर (5 वर्षों का) बालिकाओं के दर्ज, नामांकन, ठहराव का विश्लेषण एवं वार्षिक परीक्षा फल का ग्रेडवार विश्लेषण किया गया।

न्यादर्श :-

जिला जबलपुर के समस्त विकासखंडों-कुण्डम, शहपुरा, सिहोरा, पनागर, मझौली, जबलपुर ग्रामीण में संचालित समस्त 06 बालिका छात्रावासों का चयन किया गया।

उपकरण :-

जिला शिक्षा केन्द्र जबलपुर से प्राप्त आँकड़े एवं शालेय अभिलेख।
नामांकन स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन :-

जबलपुर जिले के बालिका छात्रावासों की बालिकाओं की विद्यालय में दर्ज नामांकन की स्थिति हेतु तालिका					
माध्यमिक विद्यालय					
स.क.	सत्र	कक्षा			कुल नामांकन
		6 वीं	7 वीं	8 वीं	
1	2009-10	142	121	141	404
2	2010-11	133	143	147	423
3	2011-12	135	157	147	439
4	2012-13	177	141	152	470
5	2013-14	160	173	132	465
TOTAL		747	735	719	2201

उपर्युक्त सारणी में विभिन्न सत्रों में बालिका छात्रावासों (सामान्य) के माध्यमिक विद्यालयों में कक्षा 6 वीं, 7 वीं एवं 8 वीं की बालिकाओं की नामांकन संख्या अंकित की गई है। सत्र 2009-10 में कक्षा 6 वीं, 7 वीं एवं 8 वीं की बालिकाओं की नामांकन संख्या क्रमशः 142, 121, 141 एवं कुल 404 है। सत्र 2010-11 में यही संख्या क्रमशः 133, 143, 147 एवं कुल 423 एवं सत्र 2011-12 में नामांकन संख्या क्रमशः 135, 157, 147 एवं कुल 439 है। इसी प्रकार सत्र 2012-13 कक्षा 6 वीं, 7 वीं एवं 8 वीं की बालिकाओं की नामांकन संख्या क्रमशः 177, 141, 152 एवं कुल 470 है। सत्र 2013-14 में यही संख्या क्रमशः 160, 173, 132 एवं कुल 465 है।

समग्र रूप से सत्र 2009-10 से 2013-14 तक कक्षा 6, 7 एवं 8 वीं की कक्षाओं का कुल नामांकन क्रमशः 404, 423, 439, 470 एवं 465 है, जो बालिका छात्रावास (सामान्य) योजना के अंतर्गत बालिका छात्रावासों की बालिकाओं के नामांकन की उत्तरोत्तर प्रगति को प्रदर्शित कर रहे हैं।

ठहराव स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन:-

जबलपुर जिले की बालिका छात्रावासों की बालिकाओं की विद्यालय में दर्ज ठहराव की स्थिति हेतु तालिका							
माध्यमिक विद्यालय							
स.क.	सत्र	कक्षा			कुल नामांकन	2011.12 में कक्षा 6 वीं में प्रवेशी बालिकाओं की संख्या	2013.14 में कक्षा 8 वीं में पहुंचने वाली बालिकाओं की संख्या
		6 वीं	7 वीं	8 वीं			
1	2009.10	142	121	141	404	135	132
2	2010.11	133	143	147	423		
3	2011.12	135	157	147	439		
4	2012.13	177	141	152	470		
5	2013.14	160	173	132	465		
TOTAL		747	735	719	2201	135	132

उपर्युक्त सारणी में माध्यमिक स्तर पर सत्र 2011-12 में कक्षा 6 वीं प्रवेशी बालिकाओं की संख्या 135 है वहीं सत्र 2013-14 में कक्षा 8 वीं में पहुंचने वाली बालिकाओं की संख्या 132 प्राप्त हुई।

सत्र 2011-12 से कक्षा 6 वीं बालिकाओं का नामांकित होकर सत्र 2013-14 में कक्षा 8 वीं पहुंचने पर 135-132=03 बालिकाओं का ठहराव कम है। वर्तमान स्थिति में बालिका छात्रावासों (सामान्य) में निर्धारित नामांकन सीट संख्या पूर्ण है कुछ सत्रों में आवासीय बालिकाओं की ठहराव स्थिति में विभिन्न कारणों से कमी पाई गई।

बालिका छात्रावासों (सामान्य) की वार्डन ने छात्रावास के अभिलेखों के आधार पर 03 बालिकाओं को विद्यालय में ठहराव कम होने के जो कारण बताए उनमें से कुछ इस प्रकार हैं:-

एक बालिका पास होकर कक्षा 9 वीं में गई तो अभिभावक छात्रावास से छोटी बहन को भी ले गए, किसी एक बालिका की बहन की मृत्यु होने पर वह घर गई तो वापिस नहीं आई। एक बालिका की मृत्यु हो गई। ऐसे कुछ कारण हैं जिनके कारण बालिका छात्रावासों को ठहराव स्थिति में (03) मामूली सी कमी है परन्तु अन्य कक्षाओं में बालिकाओं का नामांकन होने के उपरांत बालिका छात्रावासों में निर्धारित सीट संख्या में बालिकाएँ अध्ययनरत हैं।

समग्र रूप से बालिका छात्रावास (सामान्य) योजना की सुविधा के कारण सत्र 2011 – 12 में कक्षा 6 वीं में नामांकित होकर सत्र 2013 –14 में कक्षा 8 वीं में बालिकाओं का पहुँचाना (ठहराव) बालिकाओं की शैक्षिक प्रगति (ठहराव) में निरंतर वृद्धि को प्रदर्शित कर रहा है.

शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन :-

जबलपुर जिले के बालिका छात्रावास की बालिकाओं की विद्यालय में दर्ज शैक्षिक उपलब्धि हेतु तालिका																				
माध्यमिक विद्यालय																				
स. क.	सत्र	कुल नामांकन	कक्षा 6 वीं का परीक्षा परिणाम – ग्रेडवार						कक्षा 7 वीं का परीक्षा परिणाम – ग्रेडवार						कक्षा 8 वीं का परीक्षा परिणाम – ग्रेडवार					
			A	B	C	D	E	Total	A	B	C	D	E	Total	A	B	C	D	E	Total
1	2009.10	404	21	39	73	9	0	142	13	55	43	4	0	121	33	70	37	1	0	141
2	2010.11	423	22	30	73	8	0	133	28	42	69	3	0	142	21	72	54	0	0	147
3	2011.12	439	26	52	27	30	0	135	30	56	64	7	0	157	29	52	64	2	0	147
4	2012.13	470	12	53	63	49	0	177	28	55	47	11	0	141	33	71	42	6	0	152
5	2013.14	465	34	63	54	9	0	160	38	75	58	2	0	173	37	72	21	2	0	132
TOTAL		2201	115	237	290	105	0	747	112	284	281	27	0	734	153	357	218	11	0	719

बालिका छात्रावास (सामान्य) योजना के अंतर्गत माध्यमिक विद्यालयों की छात्रावासी बालिकाओं की उपलब्धि संबंधी परिणामों से स्पष्ट होता है कि सत्र 2009-10 में कक्षा 6 वीं के ग्रेड A, B, C, D एवं E क्रमशः 21, 39, 73, 09 एवं 0 (शून्य) है यही बालिकाएं जब सत्र 2010-11 में कक्षा 7 वीं में आईं तो इनके ग्रेड में निरन्तर सुधार हुआ एवं ये संख्या ग्रेड A, B, C, D एवं E क्रमशः 28, 42, 69, 03 एवं शून्य हो गई है। इसी प्रकार सत्र 2011-12 में जब बालिकाएं कक्षा 8 वीं में आईं तब इनके ग्रेड क्रमशः A, B, C, D एवं E क्रमशः 29, 52, 64, 02 एवं शून्य हो गये।

इसी प्रकार सत्र 2010-11 में कक्षा 6 वीं की बालिकाओं के A, B, C, D एवं E ग्रेड की संख्या क्रमशः 22, 30, 73, 08 एवं शून्य है, यही बालिकाएं सत्र 2011-12 में जब कक्षा 7 वीं में आईं तब इनके ग्रेड में उत्तरोत्तर वृद्धि होती हुई A, B, C, D एवं E में संख्या क्रमशः 30, 56, 64, 07 एवं शून्य प्राप्त हुई। इन्हीं बालिकाओं के सत्र 2012-13 में कक्षा 8 वीं में आने पर ग्रेड संख्या A,

B, C, D एवं E क्रमशः 33, 71, 42, 6, एवं शून्य हो गई ।

इसी तरह सत्र 2011-12 में कक्षा 6 वीं की बालिकाओं की ग्रेड संख्या A, B, C, D एवं E में क्रमशः 26, 52, 27, 30 एवं शून्य है एवं इन्हीं बालिकाओं के सत्र 2012-13 में कक्षा 7 वीं में आने पर ग्रेड संख्या A, B, C, D एवं E में क्रमशः 28, 55, 47, 11, शून्य प्राप्त हुई । सत्र 2013-14 में जब ये बालिकाएं कक्षा 8 वीं में आईं ? तो ग्रेड संख्या A, B, C, D एवं E क्रमशः 37, 72, 21, 02 एवं शून्य हो गई ।

बालिका छात्रावासों (सामान्य) की माध्यमिक विद्यालयों की बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि संबंधी संचयी परिणामों से स्पष्ट होता है कि सत्र 2009-10 से सत्र 2013-14 तक जो बालिकाएं अध्ययन कर रही थीं । उनके कक्षा 6 वीं में ग्रेड A, B, C, D एवं E क्रमशः 115, 237, 290, 105 एवं 0 (शून्य) थे जो कक्षा 7 वीं में क्रमशः 142, 284, 281, 27 एवं 0 (शून्य) हो गये तथा कक्षा 8 वीं में ये क्रमशः 153, 337, 218, 11 एवं 0 (शून्य) हो गये ।

इन परिणामों से स्पष्ट होता है कि बालिका छात्रावास (सामान्य) योजना के अंतर्गत पूर्व में जो बालिकाएं निम्न क्रम के ग्रेडों अर्थात् C, D एवं E में थीं वहीं वे ही बालिकाएं अध्ययन, अध्यापन की सुविधा के फलस्वरूप ग्रेड A एवं B में आ गईं । यह परिणाम बालिका छात्रावासों (सामान्य) की बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि में प्रगति को स्पष्ट कर रहा है ।

निष्कर्ष

1. बालिका शिक्षा की प्रगति के लिए बालिका छात्रावास योजना के अंतर्गत माध्यमिक स्तर पर बालिका विद्यालय छात्रावासों में बालिकाओं के नामांकन की उत्तरोत्तर प्रगति हुई है समग्र रूप से पाँचों सत्रों (2009-10 से 2013-14) तक कक्षा 6, 7 एवं 8 वीं के कुल नामांकन क्रमशः 404, 423, 439, 470 एवं 465 है ।
2. बालिकाओं की विद्यालय में ठहराव स्थिति कुछ मात्रा में नकारात्मक पाई क्योंकि कक्षा 6 वीं में प्रवेशी (दर्ज) बालिकाओं की संख्या 135 है व कक्षा 8 वीं में पहुँचने वाली (ठहराव) बालिकाओं की संख्या 132 है परंतु समग्र रूप से निर्धारित सीट संख्या का पूर्ण होना बालिका शिक्षा में निरंतर प्रगति को परिलक्षित कर रहा है।
3. बालिका छात्रावास योजना के अंतर्गत बालिकाओं की विद्यालय में शैक्षिक उपलब्धि में निम्न ग्रेडों से उच्च ग्रेडों में निरंतर संख्या वृद्धि शैक्षिक उपलब्धि में उत्तरोत्तर प्रगति की परिचायक है

यदि बालक-बालिका शिक्षा की असमानता की स्थिति को बदलना है तो आज बालिकाओं की शिक्षा में निवेश सबसे अधिक होना चाहिए । निवेश केवल वित्तीय संसाधनों का ही नहीं बल्कि सोच, उत्साह, और संकल्प का भी होना चाहिए । बालिका शिक्षा के सरोकारों से जुड़कर ही विकास के उच्चतम लक्ष्यों की प्राप्ति की जा सकती है ।

सन्दर्भ :-

- गाथिया जोसेफ (2002) "भारत में बालिका" सेंटर ऑफ कंसर्न फॉर चाइल्ड लेवर, कान्सेप्ट पब्लिशिंग नई दिल्ली. 2002 ISBN 8186581119.
- गोविन्दा, आर. व वर्गीस, एन. वी. (1991), "सुविधाओं की उपलब्धता, सीखने-सिखाने के वातावरण को उन्नत करने, शिक्षार्थियों के उपलब्धि स्तर तथा विद्यालयों के गुणात्मक सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका" शोध अध्ययन, जर्नल ऑफ एजुकेशनल प्लानिंग एंड एडमिनिस्ट्रेशन, वॉल्यूम 10, न. 1, पेज 17-35.
- जिला शिक्षा केन्द्र जबलपुर से प्राप्त आँकड़े ।
- Kaul, Lokesh (1998) "Methodology of Educational Research" Vikas Publishing House, IV Edition] ISSN 9788125927969
- मिश्रा, राजेंद्र एवं तिवारी प्रह्लाद, (2008), "बालिका शिक्षा", नव साक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली, ISBN 81-88 926-02-7

उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं की छात्र-छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि पर पाठ्य सहगामी क्रियाओं में सहभागिता का प्रभाव

श्रीमती संगीता कौल*

शोध सार

प्रस्तुत शोधपत्र में उच्चतर माध्यमिक शालाओं में अध्ययनरत् छात्र-छात्राएं जो पाठ्यसहगामी क्रियाओं में सक्रिय भाग लेते हैं एवं नहीं लेते हैं, उनकी शैक्षणिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। अध्ययन हेतु प्रतिदर्श के रूप में कक्षा ग्यारहवीं एवं बारहवीं के वाणिज्य समूह के छात्र-छात्राओं का चयन किया गया। अध्ययन से ज्ञात होता है कि छात्र-छात्राओं की शैक्षणिक उपलब्धि में कोई अंतर नहीं होता है। अतः विद्यालय में सक्रिय वातावरण का निर्माण करके विद्यार्थियों की रुचिकर और रचनात्मक क्रियाओं को प्रोत्साहित करना चाहिये।

शिक्षा किसी भी राष्ट्र की प्रथम आवश्यकता है। शिक्षा व्यक्ति और समाज के लिये अत्यंत आवश्यक है। देश व समाज की आवश्यकतानुसार, इसमें परिवर्तन आवश्यक है। आज का बालक, कल का भावी नागरिक है, अतः उसका सर्वांगीण विकास होना अत्यंत आवश्यक है। वर्तमान शिक्षा बालकेन्द्रित शिक्षा है। बालक ही शिक्षा का केन्द्र है। बालकों के सर्वांगीण विकास का उत्तरदायित्व विद्यालयों पर भी है। विद्यालय की विभिन्न पाठ्य सहगामी क्रियाओं में अपना सहयोग देकर, बालक विभिन्न क्षेत्रों में अपना विकास कर सकता है एवं अपने ज्ञान में वृद्धि कर सकता है।

आधुनिक युग में शिक्षा के अतिरिक्त विशेष योग्यता रखना परम आवश्यक है। शिक्षण में शिक्षक को तीन साधन उपलब्ध होते हैं :- आदेश या निर्देश, उदाहरण और प्रभाव। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में आदेशों पर अधिक जोर दिया जाता है। आदर्श शिक्षा प्रणाली में शिक्षक के उदाहरण और प्रभाव की तुलना में आदेशों को कम महत्वपूर्ण भूमिका निभानी चाहिए। निःसंदेह उन स्थानों पर जहां अंतर्ज्ञानीय गतिविधियां अधिक महत्वपूर्ण निभाती हैं। कुछ परिस्थितियों में व्याख्यानों के द्वारा आदेशों और चर्चा की भूमिका अधिक हो सकती है, लेकिन अध्ययन के क्षेत्र में जहां इच्छा शक्ति और भावुकतापूर्ण गतिविधियों की भूमिका अधिक है, लेकिन व्याख्यानों और चर्चा के माध्यम से शिक्षा देने के अन्य तरीके जैसे- पाठ्य सहगामी गतिविधियों अपनायी जानी चाहिये।

विद्यालय में बालक का सर्वांगीण विकास होता है। विद्यालय सक्रिय वातावरण का निर्माण करके छात्रों की रुचिकर और ज्ञानात्मक क्रियाओं को प्रोत्साहित करता है। छात्रों की इन रचनात्मक वृत्तियों के विकास के लिये प्रत्येक विद्यालय में पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन अत्यंत आवश्यक है। विद्यालयों को अपने पाठ्यक्रम में पाठ्य सहगामी क्रियाओं को विशेष स्थान देना चाहिए। अध्यापकों को छात्रों को पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भाग लेने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिए।

विद्यालय की "समय-सारणी" इस तरह तैयार की जानी चाहिये कि प्रत्येक विद्यार्थी को प्रतिदिन एक घंटा यौगिक आसन, जिमनास्टिक, एथलेटिक्स, खेलों, साहित्यिक सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेना हो। पी.सी.रेन ने उम्स के कथन का उल्लेख अपनी पुस्तक में किया है, "हमारे राष्ट्र की उन्नति का मुख्य कारण हमारी शक्ति है, जिसे हमने बाल अवस्था में खेलों द्वारा प्राप्त किया है।" खेलकूद दृढ़ इच्छा शक्ति, तत्काल निर्णय लेने की क्षमता एवं आपात स्थिति में तत्काल समाधान की समझ में वृद्धि करते हैं। हरलॉक के अनुसार, "बालक के नैतिक प्रशिक्षण में खेल सबसे अधिक महत्वपूर्ण साधन है।" इन्ही गुणों से चरित्र का निर्माण होता है। श्रीवास्तव, रश्मि et. al. (2011) ने परंपरागत शिक्षण विधियों एवं क्रिया-कलाप आधारित अधिगम का विद्यार्थियों की शैक्षणिक

*सहायक प्राध्यापक, जबलपुर पब्लिक कॉलेज, जबलपुर (म.प्र.)

उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन किया एवं निष्कर्ष में पाया कि क्रिया-कलाप आधारित अधिगम, परंपरागत शिक्षण विधि की अपेक्षा छात्र-छात्रा और विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि में अधिक प्रभावी पायी गयी। इस प्रकार शोध के निष्कर्ष से स्पष्ट होता है कि क्रियात्मक अधिगम का शैक्षणिक उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। अतः प्रस्तुत शोध में यह जानने का प्रयास किया गया है कि पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भाग लेने वाले एवं न लेने वाले विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि में भी अंतर पाया जाता है या नहीं।

चर :-

- ◆ स्वतंत्र चर: पाठ्य सहगामी क्रियाएँ।
- ◆ आश्रित चर: शैक्षिक उपलब्धि

उद्देश्य:-

- ◆ पाठ्य सहगामी क्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग लेने वाले व भाग न लेने वाले छात्रों की शैक्षणिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन।

परिकल्पना :-

- ◆ पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भाग लेने वाले एवं भाग न लेने वाले छात्रों की शैक्षणिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है।
- ◆ पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भाग लेने वाले एवं भाग न लेने वाली छात्राओं की शैक्षणिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है।
- ◆ पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भाग लेने वाले व भाग न लेने वाले छात्र एवं छात्राओं की शैक्षणिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है।

न्यादर्श :-

जबलपुर नगर की उच्चतर माध्यमिक शालाओं में से 15 शालाओं का चयन लॉटरी विधि द्वारा लिया गया।

शोधकार्य हेतु कक्षा ग्यारहवीं एवं बारहवीं कक्षा के 170 छात्र-छात्राओं का चयन किया गया, चयन किये गये छात्र-छात्राओं को तालिका क्रमांक 01 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका क्र. 1

पाठ्य सहगामी क्रियाओं में सहभागिता	छात्र	छात्राएं	योग
हाँ	40	45	85
नहीं	40	45	85
योग	80	85	170

उपकरण :- वार्षिक परीक्षा के प्राप्तांक।

शोध विधि :-

शोध अध्ययन के लिये आवश्यक प्रदत्तों के संकलन हेतु सर्वेक्षण विधि को अपनाया गया।

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या—

तालिका क्र. 02

सक्रिय रूप से भाग लेने वाले व सक्रिय रूप से भाग न लेने वाले छात्र-छात्राओं की शैक्षणिक उपलब्धि के प्राप्तांकों के मध्यमानों के अंतर की सार्थकता

लिंग	समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
छात्र	सक्रिय रूप से भाग लेने वाले	40	50.62	12.50	0.0034	>0.05
	सक्रिय रूप से भाग नहीं लेने वाले	40	50.33	13.13		
छात्राएं	सक्रिय रूप से भाग लेने वाले	45	50.00	11.50	0.97	>0.05
	सक्रिय रूप से भाग नहीं लेने वाले	45	52.34	11.35		
छात्र एवं छात्राएं	सक्रिय रूप से भाग लेने वाले	85	50.24	11.37	0.56	>0.05
	सक्रिय रूप से भाग नहीं लेने वाले	85	51.29	12.78		

स्वतंत्रता का अंश 78/83/133

0.05 स्तर पर सार्थकता मान 1.99/1.99/1.97

उपरोक्त तालिका में प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट होता है कि पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भाग लेने वाले एवं भाग न लेने वाले समूहों, (छात्र छात्राओं) की शैक्षणिक उपलब्धि में सार्थक अंतर नहीं है। प्राप्त क्रांतिक अनुपातों के मान क्रमशः 0.003, 0.97 एवं 0.56 हैं जो सार्थकता हेतु न्यूनतम सारणी मान की अपेक्षा कम हैं। अतः पाठ्य सहगामी क्रियाओं का उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

उपरोक्त परिणामों से यह तथ्य उभरकर सामने आता है कि विद्यार्थी अपनी शिक्षा के उस स्तर पर हैं, जहां वे अपना व्यावसायिक भविष्य निर्धारण के लिये केवल शैक्षिक उपलब्धि पर ध्यान दे रहे हैं इस स्तर पर विद्यार्थियों को अपने व्यावसायिक लक्ष्य की प्राप्ति के लिये अधिकतम ज्ञान अर्जित कर अपनी शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाने पर रहता है। यथार्थ में पाठ्य सहगामी क्रियायें सम्पूर्ण व्यक्तित्व के

विकास के लिये अत्यन्त आवश्यक हैं। परन्तु जब विद्यार्थियों को व्यावसायिक लक्ष्य पूर्ति ही जीवन का एक मात्र लक्ष्य प्रतीत होता है तो वे पाठ्य सहगामी क्रियाओं में सहभागिता को समय का दुरुपयोग मानकर उतना महत्व नहीं देते हैं। अभिभावक भी यही चाहते हैं कि उनके पाल्यों का प्रमुख लक्ष्य ज्ञानार्जन कर शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाकर व्यावसायिक लक्ष्य की प्राप्ति करना है। अतः वे भी पाठ्य सहगामी क्रियाओं में सहभागिता को उतना महत्व नहीं देते।

अतः अभिभावकों एवं शिक्षकों को, बालकों को पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भाग लेने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये। शिक्षकों को पाठ्यक्रम के अलावा अन्य पाठ्य सहगामी क्रियाओं पर भी विद्यार्थियों का ध्यान आकर्षित कराना चाहिये। पूर्व में किये गये शोध के निष्कर्ष से भी स्पष्ट होता है कि क्रिया-कलाप आधारित अधिगम, परंपरागत शिक्षण की अपेक्षा अधिक प्रभावी पायी गयी। अभिभावकों एवं शिक्षकों को इन क्रियाओं को समुचित रूप से पथ प्रदर्शित किया जाना चाहिये। इन क्रियाओं का बालक के जीवन में बहुत महत्व है, उनके व्यक्तित्व के विकास में ये क्रियाओं बालकों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक विकास में सहयोग प्रदान करती हैं। ये आत्मविश्वास, अनुशासन, नेतृत्व व्यक्तिगत गुणों, क्षमताओं में बालक को प्रशिक्षण प्रदान करती हैं।

प्रस्तुत शोध परिणामों के परिपेक्ष्य में श्रीवास्तव, रश्मि एवं अन्य (2011) के निष्कर्ष विपरीत हैं क्योंकि उन्होंने यह निष्कर्ष प्राप्त किया था कि क्रियाकलाप आधारित अधिगम से शैक्षिक उपलब्धि में वृद्धि होती है। अप्रत्यक्ष रूप से क्रियाकलाप आधारित अधिगम एवं पाठ्य सहगामी क्रियाओं में सहभागिता में आंशिक भिन्नता है क्योंकि क्रियाकलाप आधारित अधिगम मुख्यतः अध्ययन में सक्रियता को संबोधित करता है।

निष्कर्ष :-

पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भाग लेने का, छात्र/छात्रा/विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

संदर्भ :-

- गैरिट, हेनरी, ई. (1989) शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकी के प्रयोग, कल्याणी पब्लिशर्स, लुधियाना।
- कपिल, एच.के. (1997) सांख्यिकी के मूल तत्व, ISBN-81-7457-103-5 विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
- पाठक, पी.डी. एवं त्यागी, जी.एस.डी. (1978) शिक्षा के सिद्धांत, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
- राय, पारसनाथ (1999) अनुसंधान परिचय, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा।
- श्रीवास्तव, आरती एवं गौतम, आरती (2016) सामाजिक विज्ञान शिक्षण, ISBN-978-93-85872-32-7, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा
- श्रीवास्तव, रश्मि, परंपरागत शिक्षण विधियाँ एवं क्रिया-कलाप आधारित अधिगम (ए.बी.एल.) का विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि पर प्रभाव, रिचर्स लिंक, 2011, *Issue-90 Vol-x (7)*, ISSN 0973-1628 pp 119-121

माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों में अंतर का अध्ययन

डॉ. (श्रीमती) सविता गुप्ता*

श्रीमती निर्मला मिश्रा**

शोध सार

मूल्य वह चारित्रिक विशेषता है जो मनोवैज्ञानिक सामाजिक एवं सौन्दर्य बोध की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती है। नैतिक मूल्यों का संबंध शिक्षा के भावात्मक पक्ष से है। यही कारण है कि इसे व्यावहारिक ढंग से अधिक सफलतापूर्वक सिखाया जा सकता है। जो मूल्य नैतिक जीवन के लिये प्राप्त हैं, वे नैतिक मूल्य कहलाते हैं। प्रस्तुत शोध कार्य का उद्देश्य अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों का अध्ययन करना है। इस हेतु 120 विद्यार्थियों जिनमें 60 छात्र-छात्रायें माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति के तथा 60 छात्र-छात्रायें अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यालयों से न्यादर्श हेतु चयनित किये गये। इन विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों को जानने के लिये विद्या भारती प्रकाशन के नैतिक मूल्य परीक्षण का उपकरण के रूप में प्रयोग किया गया तथा निष्कर्ष स्वरूप पाया कि माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य-ईमानदारी में सार्थक अंतर पाया गया जबकि अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य-लगनशीलता, मानवीयता तथा विनम्रता में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

नैतिक मूल्यों की शिक्षा प्रदान करना विद्यालय में सबसे महत्वपूर्ण उत्तरदायित्वों में से है जिन्हें प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से विद्यालय पूर्ण करते हैं। विषयों के संज्ञानात्मक शिक्षण में भी शिक्षक के व्यक्तित्व तथा व्यवहार का, सहपाठियों के व्यवहार तथा विद्यालय के क्रिया-कलापों का प्रभाव छात्रों के मूल्यों पर आंशिक रूप से पड़ता है, परंतु वांछनीय नैतिक मूल्यों के विकास के लिये मूल्य-परक शिक्षा की आवश्यकता होती है, अतः विद्यालय के सभी क्रिया-कलापों में चाहे वो पाठ्यचर्या हो या सहपाठ्यचर्या सभी में नैतिक मूल्य प्रतिबिम्बित होने चाहिए।

मनुष्य जीवन पर्यन्त सीखता रहता है उसके अनुभवों में वृद्धि होती है, -ये अनुभव ही उसके व्यवहार को निर्देशित करते हैं। ये निर्देशक जीवन को दिशा प्रदान करते हैं। इन्हें मूल्य कहा जा सकता है। वस्तुतः मूल्य एक व्यवस्था है। मूल्य मानव जीवन में किसी महत्वपूर्ण वस्तु का प्रतिनिधित्व करते हैं। नूल्य की अवधारणा मनुष्य के प्रत्येक चुनाव, निश्चय, निर्णय तथा कार्य में विद्यमान हैं। नैतिक मूल्य मनुष्य के जीवन को अर्थ, उच्चता एवं श्रेष्ठता प्रदान करते हैं। नैतिक मूल्य सद्गुणों का समूह है, जिन्हें विद्यार्थी संस्कार, पर्यावरण एवं वातावरण के माध्यम से प्राप्त कर अपने लक्ष्य एवं व्यक्तित्व का विकास कर सकता है। बालकों के चरित्र के निर्माण में नैतिक मूल्यों की शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है। यह शिक्षा औपचारिक हो सकती है, जो विद्यालयों में विषयों के साथ दी जा सकती है। विद्यालय की शिक्षा का अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों पर नैतिक मूल्य का प्रभाव पड़ता है, अतः विद्यालय में नैतिक मूल्य की शिक्षा मात्र उपदेश न होकर विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण में सहायक होनी चाहिए, जिससे वे स्वयं को एवं अपने कर्तव्यों को समझ कर भावी जीवन का निर्माण कर सकें। मूल्य अनेक प्रकार के होते हैं - सैद्धांतिक मूल्य, आर्थिक मूल्य, सामाजिक मूल्य, नैतिक मूल्य, बौद्धिक मूल्य, धार्मिक मूल्य, राजनैतिक मूल्य, आदि। इन सभी मूल्यों का व्यक्ति के व्यक्तित्व पर बहुत प्रभाव पड़ता है। वह जैसे वातावरण में रहता उसी वातावरण के आधार पर उसके मूल्य होते हैं।

*सहायक प्राध्यापक, माता गुजरी महिला महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

**एम.एड. छात्रा, माता गुजरी महिला महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

विद्यालयों में नैतिक शिक्षा ग्रहण करना सभी विद्यार्थियों के लिये जरूरी किया गया है। सामान्य विद्यार्थियों के साथ-साथ अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थी समान रूप से नैतिक मूल्यों की शिक्षा ग्रहण कर आगामी जीवन को उज्ज्वल एवं नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण कर सकें जिससे उनमें ईमानदारी, लगनशीलता, मानवीयता एवं विनम्रता, जैसे नैतिक मूल्यों का विकास हो सके।

प्रस्तुत शोध कार्य को दिशा प्रदान करने में निम्नांकित पूर्व अनुसंधानों का विशेष योगदान रहा। **चौरसिया, एम.के. (2004)** ने नैतिक मूल्यों पर शाला के वातावरण के प्रभाव का अध्ययन किया और पाया कि सांस्कृतिक वातावरण सकारात्मक रूप से बालक के नैतिक मूल्यों को प्रभावित करता है। लिंग के आधार पर नैतिक मूल्यों में अंतर होता है। लड़कों में लड़कियों की अपेक्षा ईमानदारी, लगनशीलता, नैतिक मूल्य अधिक पाये गये। लड़कियों में लड़कों की अपेक्षा विनम्रता नैतिक मूल्य अधिक पाया गया। **सिद्दीकी, सालेहा (2007)** ने सामान्य एवं आदिवासी बालक, बालिकाओं के नैतिक मूल्य एवं स्वप्रत्यक्षीकरण पर मूल्य शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन किया और पाया कि मूल्य शिक्षा का स्व प्रत्यक्षीकरण पर आंशिक प्रभाव पड़ा। **पटेल, भारती एवं सोनेजी, डॉ. भावना (2008)** ने शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों की छात्राओं के नैतिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन किया और पाया कि शासकीय विद्यालय की छात्राओं ने नैतिक मूल्यों में सच्चाई को अधिक महत्व दिया है, जबकि अशासकीय विद्यालय की छात्राओं में ईमानदारी, सच्चाई, मानवीयता, विनम्रता, का गुण अधिक पाया गया। **पाण्डेय, डॉ. राजेश एवं मुखर्जी, डॉ. पापिया (2008)** ने सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूकता का अध्ययन (हाई स्कूल स्तर के विद्यार्थियों के संदर्भ में) किया और पाया कि सामान्य और अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की छात्राओं में ईमानदारी, सच्चाई मानवीयता, विनम्रता का गुण अधिक है एवं नैतिक मूल्यों के प्रति ज्ञान में सार्थक अंतर है। **पाण्डेय, डॉ. रामप्रकाश (2009)** ने उच्चतर माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों में मूल्य विकास हेतु मूल्य तर्क के संदर्भ में पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं की प्राथमिकता का अध्ययन किया और पाया कि पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं में केवल सहभागिता कराने से विद्यार्थियों के सहयोग मूल्य में सार्थक वृद्धि हुई है। **मनहास, डॉ. सारिका एवं कौसर, (सुश्री) रवीना (2012)** ने जम्मू के साम्बा जिले के किशोरों के मध्य नैतिकता का मूल्यांकन किया और पाया कि लिंग के अनुसार लड़के और लड़कियों के नैतिक मूल्यों में कोई सार्थक अंतर नहीं है, लेकिन नैतिकता के स्तर पर किशोरावस्था की आयु का सार्थक प्रभाव पड़ता है।

उपरोक्त अनुसंधानों से यह स्पष्ट होता है कि नैतिक मूल्यों का विकास जीवन की परिस्थितियों, का अभिभावकों के सहयोग, विद्यालय का वातावरण, विद्यालय में पढ़ाये जाने वाले माध्यम, शिक्षक का व्यक्तित्व, शिक्षक की प्रेरणा, विद्यार्थी द्वारा पढ़े जाने वाले विषय एवं उनका ज्ञान, पाठ्यक्रम की क्रियाशीलता, आदि कारकों पर निर्भर करता है। अतः माध्यमिक स्तर के विद्यालयों में उचित नैतिक संबंधी मूल्यपरक शिक्षा दी जानी चाहिये जिससे विद्यार्थी भावी जीवन में आवश्यक नैतिक मूल्यों जैसे ईमानदारी, लगनशीलता, मानवीयता, विनम्रता जैसे गुण सीख सकें। अतः इस अध्ययन में शोधकर्ता द्वारा अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों में अंतर का अध्ययन किया गया है।

उद्देश्य-

1. माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति वर्ग विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों (ईमानदारी, लगनशीलता, मानवीयता, विनम्रता) का अध्ययन।

परिकल्पना :

1. अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों (ईमानदारी, विनम्रता, लगनशीलता, मानवीयता) में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है।

चर – प्रस्तुत शोध कार्य हेतु शोधकर्ती द्वारा निम्न चरों को लिया गया है।

- ◆ स्वतंत्र चर – अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति
- ◆ परतंत्र चर – नैतिक मूल्य
- ◆ नियंत्रित मूल्य – माध्यमिक स्तर (आठवीं) के विद्यार्थी

सीमांकन – शोध कार्य को जबलपुर नगर के माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के छात्रों तक सीमित किया गया।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध हेतु न्यादर्श निम्नानुसार तालिका में दर्शाया गया है –

समूह	छात्र	छात्रा	योग
अनुसूचित जाति	30	30	60
अनुसूचित जनजाति	30	30	60
योग	60	60	120

उपकरण – प्रस्तुत शोधकार्य में ऑकड़ों के संग्रह के लिए निम्नांकित शोध उपकरण का उपयोग किया गया है :-

नैतिक मूल्य परीक्षण – विद्या भारती प्रकाशन, जबलपुर

सांख्यिकीय विधियां – प्राप्त प्राप्तांकों के विश्लेषण के लिये निम्नलिखित सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया गया है –

(1) मध्यमान (2) मानक विचलन (3) क्रांतिक अनुपात

परिणामों का विश्लेषण –

तालिका

माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य – ईमानदारी, लगनशीलता, मानवीयता एवं विनम्रता संबंधी परिणाम

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' गान
अनुसूचित जाति	60	10.40	1.18	2.50	< 0.05
अनुसूचित जनजाति	60	9.80	1.14		
अनुसूचित जाति	60	10.42	1.53	1.31	> 0.05
अनुसूचित जनजाति	60	10.10	1.07		
अनुसूचित जाति	60	9.72	1.37	0.52	> 0.05
अनुसूचित जनजाति	60	9.83	1.06		
अनुसूचित जाति	60	10.23	1.44	1.69	> 0.05
अनुसूचित जनजाति	60	9.83	1.14		

स्वतंत्रता के अंश – 118

0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 1.98

0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.62

उपरोक्त तालिका में प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य-ईमानदारी का मध्यमान 10.40 है एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य ईमानदारी का मध्यमान 9.80 है जिनमें 0.6 का अंतर है। यह अंतर सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक है क्योंकि प्राप्त क्रांतिक अनुपात का मान 2.50 है जो 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु निर्धारित मान 1.98 से अधिक है। उपरोक्त परिणामों के आधार पर निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य-ईमानदारी में सार्थक अंतर है। माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों में नैतिक मूल्य-ईमानदारी अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक है।

इसी प्रकार उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य-लगनशीलता, मानवीयता एवं विनम्रता के मध्यमान क्रमशः 10.42, 9.72, 10.23 हैं एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य ईमानदारी के मध्यमान क्रमशः 10.10, 9.83, 9.83 जिनमें क्रमशः 0.32, 0.11, 0.40 का अंतर है। यह अंतर सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक नहीं है क्योंकि प्राप्त क्रांतिक अनुपात के मान क्रमशः 1.31, 0.52 एवं 1.69 प्राप्त हुए हैं जो 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु निर्धारित मान 1.98 से कम हैं। उपरोक्त परिणामों के आधार पर निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य-लगनशीलता, मानवीयता एवं विनम्रता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य-ईमानदारी में सार्थक अंतर पाया गया है। माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति के विद्यालयों में नैतिक मूल्य ईमानदारी, अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक है। इसका कारण यह हो सकता है कि माता-पिता की शिक्षा, शिक्षक की भूमिका ईमानदारी से कार्य करने के लिए प्रेरित करती है ये परिणाम पाण्डेय, डॉ. राजेश एवं मुखर्जी डॉ. पापिया (2008) के परिणामों से मेल खाते हैं। जिनके परिणामों में सामान्य तथा अनुसूचित जाति वर्ग के विद्यार्थियों में नैतिक मूल्यों में सार्थक अंतर है। माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों—लगनशीलता, विनम्रता, मानवीयता में सार्थक अंतर नहीं पाया गया। इसका कारण यह हो सकता है कि दोनों वर्गों के विद्यार्थियों पर मूल प्रवृत्ति का समान रूप से प्रभाव पड़ता है।

निष्कर्ष : प्रस्तुत शोध कार्य के निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले गए—

- (1) माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य ईमानदारी में सार्थक अंतर पाया गया है। माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों में नैतिक मूल्य ईमानदारी अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक है। क्योंकि प्राप्त क्रांतिक अनुपात का मान 2.50 है जो 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु निर्धारित मान 1.98 से अधिक है।
- (2) माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य लगनशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है क्योंकि प्राप्त क्रांतिक अनुपात का मान 1.31 है जो 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु निर्धारित मान 1.98 से कम है।
- (3) माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य मानवीयता में कोई सार्थक अंतर नहीं है क्योंकि प्राप्त क्रांतिक अनुपात का मान 0.52 है जो 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु निर्धारित मान 1.98 से कम है।
- (4) माध्यमिक स्तर के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य विनम्रता में कोई सार्थक अंतर नहीं है क्योंकि प्राप्त क्रांतिक अनुपात का मान 1.69 है जो 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु निर्धारित मान 1.98 से कम है।

संदर्भ ग्रंथ –

- कोष्टा, लता (2007-08)- “विभिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के विद्यालयों के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य एवं स्वबोध का अध्ययन”, लघु शोध प्रबंध, जबलपुर, माता गुजरी महिला महाविद्यालय,
- पाण्डेय, राजेश एवं डॉ. पापिया (2008) “सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूकता का अध्ययन” (हाई स्कूल के संदर्भ में) रिसर्च लिंक 57, वाल्यूम VII (10), दिसंबर 2002, पृ.सं. 84
- पटेल, भारती एवं सोनेजी, डॉ. भावना (2008) “शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों की छात्राओं के नैतिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन”, रिसर्च लिंक- 50(A), वॉल्यूम VII (1), पृ.सं. 68-69
- श्रीवास्तव, एन.आर. स्वरूप एवं पाण्डेय, डॉ. के.पी. (2011)- “शिक्षा के दार्शनिक एवं समाज शास्त्रीय सिद्धांत”, मेरठ, विनय रखेजा, आर. लाल बुक डिपो, पृ.सं. 600
- त्यागी, जी.एस.डी. एवं पाठक, पी.डी. (1991)- “शिक्षा के सामान्य सिद्धांत”, आगरा, विनोद पुस्तक मंदिर, नवीनतम संस्करण, पृ.सं. 34
- वर्मा, जी.एल. (2010)- “मूल्य शिक्षा, पर्यावरण एवं मानवाधिकार”, मेरठ, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, पृ.सं. 3

निदानात्मक परीक्षण का विज्ञान शिक्षण में महत्व

डॉ. (श्रीमती) सुलक्षणा त्रिपाठी*

विज्ञान अनुभवों पर आधारित निरीक्षणों की एक अनंत श्रृंखला है जो कि प्रत्ययों तथा सिद्धांतों के निर्माण करने का कार्य करती है, जबकि ये प्रत्यय तथा सिद्धांत आगे अनुभवों पर आधारित निरीक्षणों द्वारा परिवर्तित किये जा सकते हैं। विज्ञान, ज्ञान के भण्डार के साथ-साथ इसको प्राप्त करने तथा इसमें सुधार करने की प्रक्रिया है। इस प्रकार निष्कर्ष यह निकलता है विज्ञान ज्ञान का भण्डार तथा जाँच करने की स्वयं मूल्यांकन करने वाली एक अनंत प्रक्रिया है। विज्ञान का यही रूप हम उन शालायी बालकों के समक्ष प्रस्तुत करना चाहते हैं जिनके बारे में संभावना है कि वे विज्ञान की गतिशील तथा रोमांचकारी के स्थान पर शुष्क, नीरस तथा गतिहीन समझ रहे हैं।

“विज्ञान ज्ञान की एक शाखा है और ज्ञान को प्राप्त करने तथा सुधारने की एक प्रक्रिया भी है।”

विज्ञान विषय में बालक को विषय के प्रत्ययों, सूत्रों, नियमों एवं सिद्धांतों को समझने में कठिनाई अनुभव होती है। अतः बालक की इस कमजोरी या कठिनाई का क्या कारण है? कुछ छात्र शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक दृष्टि से समान रूप से विकास नहीं कर पाते तथा कुछ छात्रों में ये विकास असाधारण होता है। दोनों ही स्थितियों में छात्रों की विषय में अरुचि होना स्वाभाविक है, अतः निदान कर हम अरुचि के कारणों का पता लगा सकते हैं।

निदानात्मक परीक्षण के माध्यम से बालक की विशिष्ट विषय-वस्तु अथवा अधिगम अनुभव के अर्जित ज्ञान की विशिष्टताओं एवं कमियों का मूल्यांकन किया जाता है। इन परीक्षण से छात्रों के स्तर का पता नहीं लगाया जाता बल्कि छात्र किसी विषय को समझने में क्या कठिनाई का अनुभव कर रहा है? किस स्तर पर यह कठिनाई है? इस कठिनाई का क्या कारण हो सकता है? तथा यह कठिनाई किस प्रकार दूर की जा सकती है? आदि प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए शिक्षक को निदान की आवश्यकता पड़ती है।

जिस प्रकार एक सफल चिकित्सक किसी रोगी की चिकित्सा करने से पूर्व भली-भांति उसके रोग का निरीक्षण करता है, रोग के कारण जानने के लिये विभिन्न उपकरणों का सहारा लेकर रोग के बारे में निश्चय करता है जिससे वह रोग के लक्षणों की तुलना करके चिकित्सा प्रारंभ करता है। ठीक उसी प्रकार से एक सफल शिक्षक भी सर्वप्रथम यह ज्ञात करता है कि बालक किन कारणों से विषय को समझने में कठिनाई अनुभव कर रहा है। उसके कठिनाई के स्थल कौन-कौन से है तथा ऐसे कितने छात्र हैं जो उसकी श्रेणी में आते हैं? यह सब जानकारी प्राप्त करने के लिए वह निदानात्मक परीक्षणों की सहायता लेता है।

इस प्रकार वह उन छात्रों का अध्ययन करता है जो ऐसी कठिनाइयों का अनुभव कर रहे हैं। ये परीक्षण निदानात्मक परीक्षण होते हैं छात्र की शैक्षणिक दुर्बलता के संभावित कारणों का पता लगाने के लिये शिक्षक जो भी वैज्ञानिक पद्धति अपनायेगा और इसके अपनाने के क्रम में जो भी कार्य संपन्न करेगा, वही नैदानिक परीक्षण की प्रक्रिया होगी।

बालकों के सीखने, अधिगम कमजोरियों के कारण तथा कठिनाइयों का ज्ञान प्राप्त करने की प्रक्रिया को शैक्षणिक निदान कहते हैं। निदानात्मक परीक्षण का कार्य उन तथ्यों का विश्लेषण भी करना है जिनके कारण छात्रों को कठिनाई होती है।

“निदानात्मक परीक्षण व्यक्ति की जाँच करने के पश्चात् किसी एक या अधिक क्षेत्रों में उसकी विशेषताओं एवं कमियों को व्यक्त करता है।”

नैदानिक परीक्षा, जो शिक्षक एवं छात्रों की दृष्टि से उपयोगी हो, उसमें निम्नलिखित गुणों का होना अनिवार्य है—

- (1) नैदानिक परीक्षाएँ पाठ्यक्रम का मुख्य अंग होती हैं।
- (2) नैदानिक परीक्षाएँ विशिष्ट उद्देश्यों के अनुरूप होती हैं।

*सहायक प्राध्यापक, हितकारिणी प्रशिक्षण महिला महाविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

- (3) ये परीक्षाएँ प्रमापीकृत होती हैं, परंतु कुछ विशेषज्ञों का विचार है कि निदानात्मक परीक्षाओं को प्रमापीकृत नहीं किया जाता है।
- (4) निदानात्मक परीक्षाएँ छात्रों की योग्यताओं का मापन नहीं करती हैं, बल्कि इनके द्वारा विषय संबंधी कमजोरियों का निदान करके उसके उपचार की व्यवस्था की जाती है।
- (5) निदानात्मक परीक्षायें विश्लेषणात्मक होती हैं तथा किसी भी प्रक्रिया के अंशों का पूर्ण रूप से विश्लेषण करती हैं।
- (6) निदानात्मक परीक्षाओं का आधार ऐसे तथ्य या मानक होते हैं, जिन्हें प्रयोगों के आधार पर स्थापित किया जाता है।
- (7) निदानात्मक परीक्षाओं में समय सीमा निर्धारित नहीं की जाती है।
- (8) निदानात्मक परीक्षाओं में छात्र द्वारा प्राप्त अंकों को कोई महत्व नहीं दिया जाता, बल्कि यह देखा जाता है कि छात्र किस स्तर की कठिनाई वाले प्रश्नों को हल कर लेता है एवं उसकी कठिनाई कहीं से आरम्भ होती है।
- (9) निदानात्मक परीक्षाएँ छात्रों की प्रगति का वस्तुनिष्ठ रूप से परीक्षण करती हैं।
- (10) निदानात्मक परीक्षा सीखने वाले की मानसिक प्रक्रिया के स्वरूप को बिलकुल स्पष्ट कर देती है।

निदानात्मक परीक्षण छात्रों की विषय की कमजोरी को पहचानने में मदद करता है। छात्र विषयांतर्गत कौन सी कठिनाइयों के कारण पिछड़ रहे हैं तथा यह भी पता लगाने में मदद करता है कि छात्र को विषय से संबंधित कौन सी बातों, तथ्यों, प्रत्ययों को समझने में कठिनाई हो रही है।

एक सफल शिक्षक समय-समय पर छात्रों को परीक्षाओं के माध्यम से छात्रों की परेशानी को समझने का प्रयास करता है।

छात्रों के विज्ञान विषय में कमजोर होने के प्रमुख कारण निम्नांकित हो सकते हैं:-

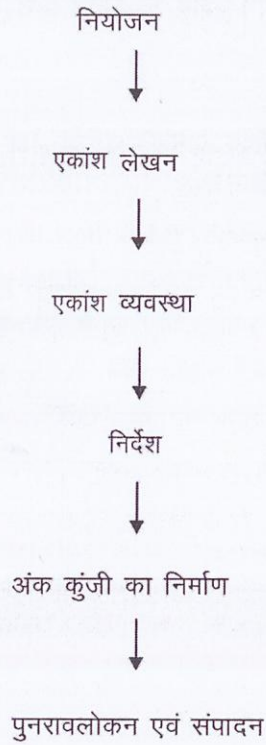
- (1) **मंदबुद्धि होना**— मंद बुद्धि छात्र प्रखर बुद्धि वाले छात्र के साथ पढ़ते समय पाठ्यक्रम में पिछड़ जाते हैं। अनेक बार वे शिक्षक द्वारा बताई गई बातों को ठीक प्रकार से समझ नहीं पाते हैं तथा संकोचवश पूछते भी नहीं हैं। शिक्षक को ऐसी विधियों का प्रयोग करना चाहिए कि वह तीव्र बुद्धि एवं मंद बुद्धि दोनों प्रकार के बालकों को अलग-अलग स्तर पर विकास करने का समांग अवसर प्रदान कर सके।
- (2) **वातावरण का दूषित होना**— अनेक बार घर का वातावरण भी बालकों की कमजोरी का कारण होता है। घर में झगड़े, डॉट-डपट, गरीबी या परिवार का अशिक्षित होना भी बालकों के विकास में बाधक होता है। बाह्य वातावरण, सिनेमा, दूरदर्शन का सीमा से अधिक उपयोग भी उनके विचारों को दूषित करता है।
- (3) **शारीरिक दोष**— बालक में कोई भी शारीरिक दोष; जैसे—ऊँचा सुनना, हकलाना, तुतलाना, दृष्टि शक्ति क्षीण होना आदि पाये जाने के कारण भी छात्र कक्षा में पिछड़ जाते हैं।
- (4) **भावनात्मक ग्रंथियाँ**— बालक को माँ-बाप का पर्याप्त प्यार या अत्याधिक प्यार मिलने से मनोग्रंथियों से संवेगात्मक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं, इस कारण छात्र पढ़ने से पिछड़ जाता है। इसके अलावा अध्यापक का कठोर व्यवहार, कुसंगत, हर समय उपहास, आत्म प्रदर्शन का अवसर न दिया जाना, इत्यादि अनेक कारण भी छात्र के पिछड़ेपन के लिए उत्तरदायी हो सकते हैं।
- (5) **कक्षा में अनुपस्थित रहना**— कक्षा में लंबे समय तक अनुपस्थित रहना भी छात्रों को पढ़ने में बाधा प्रस्तुत करता है।
- (6) **शारीरिक रूप से अस्वस्थ होना**— अस्वस्थता का प्रभाव छात्रों की स्मृति, अवधान शक्ति एवं श्रम योग्यता पर पड़ता है। शारीरिक रूप से अस्वस्थ छात्र कक्षा में पिछड़ जाते हैं।
- (7) **विषय संबंधी पृष्ठभूमि का प्रभाव**— अनेक बार देखा गया कि बालकों की विषय संबंधी पृष्ठ-भूमि का प्रभाव भी उनकी प्रगति में बाधक सिद्ध होता है। वे समय, माप और तौल संबंधी इकाइयों को समझने में कठिनाई अनुभव करते हैं तथा इनके प्रयोग में त्रुटियाँ

करते हैं। कभी-कभी छात्रों का परिभाषायें, चिन्ह, सूत्र, सिद्धांत का अस्पष्ट ज्ञान भी उनकी प्रगति में बाधक होता है। प्रत्यय स्पष्ट नहीं होते।

(8) दूषित शिक्षा पद्धति एवं अमनोवैज्ञानिक व्यवहार— अमनोवैज्ञानिक व्यवहार तथा अयोग्य शिक्षा पद्धति के कारण भी बालक विषय में पिछड़ जाते हैं।

(9) प्रखर बुद्धि होना— प्रखर बुद्धि वाले बालक भी कभी कभी समस्या पैदा कर देते हैं। ऐसे बालकों को पर्याप्त मात्रा में कार्य न मिलने से वे कक्षा में समस्या खड़ी कर देते हैं। कुछ बालकों द्वारा प्रश्नों के लिखित उत्तर मिल जाने से अध्यापक यह समझता है कि कक्षा में सभी बालकों को समझ आ गया है और वह इस प्रकार अपना पाठ्यक्रम पूरा कर देता है जिससे वह कमजोर और विषय में दुर्बल विद्यार्थियों पर उचित ध्यान नहीं दे पाता है।

निदानात्मक परीक्षण की निर्माण प्रक्रिया



निदानात्मक परीक्षण का महत्व

1 बालकेंद्रित शिक्षा के लिए उपयोगी— निदानात्मक परीक्षण की सहायता से अध्यापक अपनी कक्षा के छात्रों की वैयक्तिक भिन्नता को समझ लेता है। किसी छात्र ने विषय वस्तु को कहाँ तक सीखा है और क्या नहीं सीख पाया है, इन सभी बातों का ज्ञान निदानात्मक परीक्षण के द्वारा ही हो सकता है।

2 शैक्षिक परिस्थितियों के लिए उपयोगी— पठन-पाठन की स्थितियों को प्रभावशाली बनाने हेतु इन निदानात्मक परीक्षणों का प्रयोग अध्यापक द्वारा व्यापक रूप में किया जाता है। शैक्षिक परिस्थितियों के लिए ये अत्यंत महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सिद्ध हो चुके हैं। अतएव एक अध्यापक के लिए आवश्यक है कि वह एक निदानकर्ता भी हो।

3 श्रम एवं समय की बचत— निदानात्मक परीक्षण के अभाव में अध्यापक को अपना समय एक ही विषय सामग्री को बार—बार पढ़ाने में अधिक खर्च करना पड़ता है। निदानात्मक परीक्षण के द्वारा छात्र की कठिनाइयों का पता लगाकर उस कठिनाई को दूर कर दिया जाता है। इससे अध्यापक का श्रम एवं समय दोनों बचता है।

यदि शैक्षिक निदान को उपचार से संबंधित कर दिया जाय तो निश्चित ही इससे छात्रों को बहुत अधिक लाभ होगा। प्रयोगों के आधार पर यह सिद्ध किया जा चुका है कि शैक्षणिक निदान एवं उपचारात्मक शिक्षण सभी विषयों में उपयोगी सिद्ध हुए हैं। निदानात्मक परीक्षाओं एवं उपचारात्मक शिक्षण में चोली—दामन का संबंध है। बुनकर तथा मेलनी के शब्दों में “निदानात्मक परीक्षाओं का प्रमुख उद्देश्य किसी विषय वस्तु में बालक की विशिष्ट कमजोरी को प्रकाश में लाना है ताकि कमजोरी के कारणों की छानबीन कर सुधार हेतु उपचारात्मक कदम उठाये जा सकें”।

अंत में यह कहा जा सकता है कि निदानात्मक परीक्षण के द्वारा विद्यार्थियों की विज्ञान विषय को समझने में होने वाली कठिनाई को दूर किया जा सकता है अतः निदानात्मक परीक्षण विज्ञान विषय को कठिन से सरल बनाते हुये बोधगम्य सहज व सरल बनाता है।

संदर्भ ग्रंथ

- (1) भूषण, शैलेंद्र (2008) “जीव विज्ञान शिक्षण” श्री विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पृ.सं.134—135
- (2) महेश्वरी, वी.के., महेश्वरी, सुधा “विज्ञान शिक्षण” आर.लाल. बुक डिपो, मेरठ
- (3) Saxena, N.R.Mishra, Mohanty, M.R. (2005) "Teaching of Economics" R.Lall Book Depot.
- (4) शर्मा, एच.एस. (2004) “विज्ञान शिक्षण के नये आयाम” राधा प्रकाशन मंदिर, आगरा, पृ.सं.243—246
- (5) शर्मा, श्रीमती राजकुमारी (2005—06) “हिन्दी शिक्षण” राधा प्रकाशन मंदिर, आगरा, पृ.सं.394—401
- (6) सूद, प्रो.जे.के. (2010) “विज्ञान शिक्षण” अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा, पृ.सं.252—254
- (7) त्यागी, गुरसरणदास, “अर्थशास्त्र शिक्षण” विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, नवीनतम संस्करण

मूल्यों के निर्माण में परिवार, विद्यालय एवं समाज की भूमिका

डॉ. (श्रीमती) तृप्ति श्रीवास्तव *

समय का चक्र निरन्तर घूमता रहता है और बीता हुआ युग नयी करवट ले लेता है। प्रत्येक युग में व्यक्ति और समाज अपनी सभ्यता व संस्कृति, प्रथाओं एवं रीति-रिवाजों को जीकर फिर नये युग की राह देखता है, उसकी प्रतीक्षा करता है। प्राचीन युग की सामाजिक मान्यताएं व सामाजिक मूल्य नये युग में पुराने पड़ जाते हैं। एक युग के बदलते ही नये युग का श्री गणेश हो जाता है, तब व्यक्ति व समाज में अभूतपूर्व परिवर्तन होता है।

प्रकृति में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। मनुष्य भी प्रकृति की गोद में जन्म लेता है, उसका पोषण होता है तथा उसी में अंतिम श्वास लेता है। वह प्रकृति का पुतला है, प्रकृति द्वारा निर्मित है इसलिये उसके मन और शरीर, आत्मा और विचार, संस्कृति व सभ्यता, मान्यताएं, मूल्य सबको प्रकृति प्रभावित करती है। प्रकृति की तरह ही मानवीय प्रकृति को भी स्वस्थ मूल्यों की दिशा प्रदान की जा सकती है।

मूल्य हमारी निजी अभिवृत्ति का वह कार्य है जिसकी उपयोगिता एक व्यक्ति, समाज, राष्ट्र अथवा विश्व के लिये उपयुक्त व महत्वपूर्ण परिग्रहण है और साथ ही वह आस्तिकमयी तथा निर्धारक प्रवृत्ति भी है। मूल्य स्वयं एक व्यवस्था है। मूल्य की अपनी एक प्राकृतिक व्यवस्था है। मूल्य संबंधों को संतुलित करके व्यवहारों में एकरूपता स्थापित करते हैं। मूल्य की कल्पना मानव अस्तित्व को उसके पूर्णरूप में स्वीकृत किये बिना सम्भव नहीं है। डॉ. अनीता के अनुसार—“मूल्य का अर्थ है जीवन के प्रति दृष्टिकोण”, एक मानवीय विचारधारा, समाज के साथ संबंध। मूल्यों के आधार पर मानव जीवन अपने समग्र रूप में एक निश्चित मापदण्ड का निर्धारण करता है जो उसके कार्य-व्यवहार व आचरण को प्रभावित करते हैं। राधा कमल मुखर्जी के अनुसार—मूल्य समाज द्वारा मान्यता प्राप्त इच्छाएं तथा लक्ष्य हैं जिनका अन्तरीकरण सीखने या सामाजिकरण की प्रक्रिया के माध्यम से होता है जो कि अतीतिक अधिमान्यताएं मान तथा अभिभावनाएं बन जाती हैं।

आदिम युग से लेकर दासता युग, सामन्तवादी युग में हुये परिवर्तनों को हम आधुनिक युग में देख सकते हैं। आधुनिक युग को हम पूंजीवादी युग भी कह सकते हैं जिसने उपभोक्तावादी संस्कृति को जन्म दिया। इस भौतिक युग में नैतिक मूल्यों व आध्यात्मिक मूल्यों को अत्याधिक ह्रास हुआ। उपभोक्तावादी संस्कृति ने श्रेष्ठ मानवीय मूल्यों को छिन्न भिन्न कर दिया जिसके कारण मानव दिशाहीन होकर भटक रहा है। उसके वैयक्तिक मूल्यों में भी भारी कमी आयी है। सत्य, प्रेम, धैर्य, सहनशीलता, आत्मविश्वास का स्थान झूठ, घृणा, अधैर्य, सुसहनशीलता अनास्था ने ले लिया है। त्याग, अनासक्ति, ऋजुता, मृदुता, निर्भयता, आत्मबल, प्रामाणिकता के स्थान पर भोग, अनासक्ति कठोरता, कटुता, भय, शक्तिहीनता, अप्रामाणिकता का बोलबाला है। इस मूल्यहीनता को लेकर व्यक्ति तथा समाज किस प्रकार अपने दायित्वों को वहन कर सकते हैं। हमारे सामाजिक मूल्यों, राजनीतिक मूल्यों, जनतांत्रिक मूल्यों, आर्थिक मूल्यों, धार्मिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों में निरंतर ह्रास होता जा रहा है।

आज का युग मूल्यहीनता का युग है। हमें वैयक्तिक, सामाजिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, आर्थिक, राजनीतिक, बौद्धिक, मानसिक, सांस्कृतिक, वैज्ञानिक, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से श्रेष्ठ मूल्यों को अपने जीवन में आत्मसात करना होगा।

वैयक्तिक मूल्यों में झूठ पर सत्य को, घृणा पर प्रेम, हिंसा पर अहिंसा, अधैर्य पर धैर्य, कटुता पर मृदुता, क्रूरता पर करुणा, निरावलम्बन पर स्वावलम्बन, अकर्मण्यता पर कर्मनिष्ठा या कर्तव्य पालन, असहिष्णुता पर सहिष्णुता, भय पर निर्भयता की स्थापना करनी होगी।

*सहायक प्राध्यापक, हितकारिणी प्रशिक्षण महिला महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

सामाजिक मूल्यों में स्व-अस्तित्व के स्थान पर सह-अस्तित्व व अन्याय के स्थान पर न्याय, आर्थिक मूल्यों में भ्रष्टाचार से ईमानदारी, परिग्रह से अपरिग्रह, व्यक्तिवाद से समाजवाद की ओर कदम बढ़ाना होगा। लोकतांत्रिक चेतना जागृत कर समता, स्वतंत्रता, बंधुत्व व लौकिकता की स्थापना कर राजनीतिक मूल्यों की स्थापना की जा सकती है। मानसिक असंतुलन के स्थान पर मानसिक संतुलन, एकांगी दृष्टिकोण के स्थान पर समन्वयवादी दृष्टिकोण को अपनाना होगा और आध्यात्म और विज्ञान का संगम कर व्यक्तित्व को नये ढांचे में प्रस्तुत करना होगा। सर्वधर्म समभाव, समन्वित सम्प्रदाय निरपेक्षता द्वारा धार्मिक मूल्यों व अति भौतिकतावाद वाली उपभोक्तावादी संस्कृति के स्थान पर आध्यात्मिक मूल्यों की स्थापना करनी है व आत्मानुशासन व अनासक्ति की ओर बढ़ना है।

हमें सांस्कृतिक विरासत की रक्षा करते हुये एवं सौंदर्यबोध को अपनाकर सत्यं, शिवं, सुन्दरम् के त्रिगुण को अपने व्यक्तित्व में धारण कर सांस्कृतिक व सौंदर्यात्मक मूल्यों की स्थापना करनी होगी। राष्ट्रीय एकता व मानवीय एकता की स्थापना के लिये विघटनकारी शक्तियों (आतंकवाद, जातीयता, क्षेत्रीयता, साम्प्रदायिकता, भाषावाद आदि) को दूर करना होगा व वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को अपनाकर राष्ट्रीय चरित्र विकसित करना होगा।

इन श्रेयस्कर मूल्यों की स्थापना का दायित्व किसका है – समाज का, व्यक्ति का, साहित्य का, धर्म का, कला का, राजनीति का, शिक्षा का या संस्कृति का? व्यक्ति को बदले बिना समाज को नहीं बदला जा सकता और समाज को बदले बिना व्यक्ति को नहीं बदला जा सकता। नैतिक एवं मूल्य परक शिक्षा का दायित्व परिवार, विद्यालय और समाज सभी का है। घर और परिवार नैतिक शिक्षा का प्रथम व महत्वपूर्ण अभिकरण है। परिवार में ही हम परस्पर अन्तःक्रियाओं एवं विचारों का आदान प्रदान करते हुये एक-एक सामान्य संस्कृति का निर्माण करते हैं, उसे बनाये रखते हैं तभी सब एक परिवार के सदस्य के रूप में नैतिक मूल्यों और नैतिक मानों का संरक्षण, सम्प्रेषण व सृजन करते हैं। बालक के समाजीकरण में परिवार अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। परिवार में नैतिक मूल्यों की रक्षा होनी चाहिये इसलिये सदा प्रिय, सत्य, दूसरे को हितकारी बोल बोलने चाहिये, अप्रिय सत्य नहीं बोलना चाहिये।

“सत्यं ब्रूयात्प्रियम् ब्रूयात् ब्रूयात् सत्यम् प्रियम्”। परिवार, शिक्षा और समाजीकरण के द्वारा परिवार की युवा पीढ़ी के सदस्यों में मूल्यों के संरक्षण, सम्प्रेषण और सृजन के द्वारा महत्वपूर्ण योग दे सकता है। अपने लोकाचारों और जनरीतियों के परिचालन द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से नैतिकता का ज्ञान दे सकता है। विशिष्ट सांस्कृतिक प्रतिमानों के संरक्षण, हस्तांतरण और सृजन द्वारा नैतिक मूल्यों में संवर्धन कर सकता है।

परिवार बालक के 'सामाजिक स्व' का निर्माण करता है। वैयक्तिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मूल्यों की स्थापना में योग देता है। परिवार में ही श्रेष्ठ आदतों का निर्माण होता है, अच्छे व्यवहार निश्चित होते हैं, संवेगात्मक विकास की नींव रखी जाती है, व्यक्ति के चरित्र का निर्माण होता है। अतः परिवार आदर्शों का पालन और श्रेष्ठ उद्देश्यों की प्राप्ति व श्रेष्ठ मूल्यों को प्रदान करने का सर्वश्रेष्ठ स्थान है। बालक के मूल्यों के निर्माण में परिवार की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। जन्म लेने के पश्चात उसे परिवार द्वारा ही निर्देशन व मार्गदर्शन प्राप्त होता है। बालक की प्रथम आदर्श उसकी माँ ही होती है। जार्ज हरबर्ट के अनुसार 'एक अच्छी माँ सौ शिक्षकों के बराबर होती है।' अब्राहम लिंक्न के अनुसार 'मैं जो कुछ भी हूँ और जो कुछ भी बनना चाहता हूँ, मैं मेरी माँ का ऋणी हूँ।' स्वामी शिवानन्द के अनुसार 'माँ का प्यार बालक के व्यक्तित्व के स्वस्थ विकास के लिये अत्यन्त आवश्यक है।' सैमुअल के अनुसार 'मुख्यतः घर में ही दिल खुलता है, आदतों का निर्माण होता है, बुद्धि जाग्रत होती है एवं लक्षण अच्छे या बुरे ढलते हैं।'

नैतिक मूल्यों द्वारा ही बालक के चरित्र का विकास हो सकता है। अतः बालक के लिये ऐसे वातावरण का निर्माण करना चाहिये, जिससे उसमें संकल्पशक्ति, स्नेह, संवेगात्मक सुरक्षा, स्व-नियंत्रण, उचित अभिव्यक्ति व सही व उचित कार्य के लिये प्रेरणा प्राप्त हो सके। बालक घर में ही नैतिकता व विशिष्ट परिस्थितियों के अनुसार व्यवहार करने के तरीकों को सीखता है। नैतिक व्यवहार के चार

सिद्धान्त मुख्य हैं- 1- नैतिक व्यवहार समाज के नियमों के अनुरूप होना चाहिये। 2- बालक को स्पष्ट रूप से उनकी तार्किकता को स्पष्ट करना चाहिये। 3- बालक में यह समझ जाग्रत करनी चाहिये कि सही क्या है और गलत क्या है। 4- वयस्कों के निर्देशन में बालक को सही व्यवहार पर सुख व गलत व्यवहार पर दुःख प्राप्त होना चाहिये।

परिवार आदर्शों का पालना है। लक्षणों के निर्माण का पात्र है एवं परोपकार की भावना को विकसित करने वाला विद्यालय है। यह मानव प्रकृति की प्राथमिक शाला है। मित्रता, राजनीतिक संगठन एवं न्याय के साधन एवं बीज मूलतः परिवार में ही पाये जाते हैं। परिवार के सदस्यों का उसके नैतिक विकास पर निम्न प्रभाव पड़ता है- 1- परिवार का व्यवहार बालक के लिये आदर्श है। वह उसका ही अनुकरण करता है। 2- परिवार प्रशंसा, पुरस्कार एवं सजा से सामाजिक व्यवहार सिखाता है। 3- अच्छा व्यवहार करने के लिये प्रेरणा प्रदान करता है।

परिवार के पश्चात् विद्यालय औपचारिक और अनौपचारिक शिक्षा का महत्वपूर्ण अभिकरण है। वर्तमान में औद्योगिक और वैज्ञानिक विकास ने उपभोक्तावाद को जन्म देकर नैतिक मूल्यों का हनन किया है। इन मूल्यों के निर्माण में विद्यालय एक उत्तम स्थान है। विद्यालय समाज का सूक्ष्म आदर्श रूप होता है। यहाँ बालकों में उन आदतों, रुचियों, प्रवृत्तियों एवं भावनाओं का विकास होता है जो उसके जीवन का अविभाज्य अंग बन जाती हैं। "शाला एक ऐसी निष्कलंक" भूमि है, जहाँ हम नैतिकता के ऐसे बीज बो सकते हैं जो एक बार प्रस्फुटित होने पर अपने आप विकसित होते रहते हैं तथा बच्चों के प्रौढ़ जीवन में मार्गदर्शक बनते हैं। विद्यालय एक प्रयोगशाला है जहाँ विद्यार्थी ज्ञानात्मक पक्ष के साथ-साथ व्यवहारिक पक्ष की भी शिक्षा प्राप्त करता है। यह एक कर्मस्थली है, जहाँ उसमें शिक्षकों, मित्रों व विद्यालय के प्रति आत्मीयता का भाव उत्पन्न होता है और उसमें नैतिक मूल्यों का उन्नयन होता है। विद्यालय का यह दायित्व है कि वह बालक में अपेक्षित मानवीय व्यवहार के अनुरूप समुचित विकास करे। इसके लिये विद्यालय में पाठ्यक्रम, पाठ्य-सहगामी क्रियाओं, विद्यालय नियमों, अनुशासन, प्राचार्य तथा शिक्षकों के व्यक्तित्व व स्वस्थ वातावरण द्वारा उनमें अच्छे नैतिक मूल्यों का विकास किया जा सकता है।

आधुनिक और औद्योगिक समाज में समाज में नैतिक मूल्यों की शिक्षा का दायित्व अलग-अलग समाजों में अलग-अलग होता है किन्तु सभी समाजों में परिवार नैतिक मूल्यों के लिये सबसे शक्तिशाली अभिकरण है। परिवार मानक प्रस्तुत करता है, पूर्वाग्रही भी बनाता है, स्तर भेद भी रखता है। यह विशाल स्तर पर विद्यालय अभिवृत्तियों और विश्वासों के प्रभाव के लिये प्रभावशाली माध्यम है। इसके अलावा व्यवस्थित धर्म ने भी परम्परागत तरीकों से युवाओं को नैतिक मूल्यों को सिखाने में शक्तिशाली भूमिका निभायी है।

'यूनेस्को' के एक प्रतिवेदन के अनुसार - "नैतिक मूल्यों की शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें समाज अपने-अपने सदस्यों को सही व्यवहार की शिक्षा प्रदान करता है। मूल्य परक शिक्षा वस्तुतः समाजीकरण की प्रक्रिया है जिसमें बालक अपने व्यक्तित्व के विकास में नैतिक मूल्यों को आत्मसात करता है। समाज के एक सार्थक सदस्य के रूप में अपनी भूमिका निभाता है, सामाजिक परिवर्तन व सामाजिक प्रगति में योग देता है, संस्कृत का संरक्षण व हस्तांतरण ही नहीं करता पुनः सृजन करता है।

व्यक्ति, समाज और मूल्य में पाए जाने वाले पारस्परिक सम्बन्ध व प्रभाव को दर्शाने के लिये मुकर्जी ने इन्हें एक दीपक की बाती, तेल और ज्योति कहा है। जिस प्रकार तेल (समाज) के बिना बाती (व्यक्ति) अधूरी है और ज्योति (मूल्यों) के बिना बाती (व्यक्ति) और तेल (समाज) दोनों ही अर्थहीन हैं अर्थात् मूल्य ही समाज और व्यक्ति के जीवन में ज्योति जलाता है। मुकर्जी के शब्दों में, "मनुष्य और समाज" तैरती हुयी बाती और गहरे तेल के बीच चलने वाले अनन्त आदान-प्रदान से "मूल्य" अनुभव की उजली, स्थिर ज्योति बनती है जो कि हमारे नीरस और निरानन्द विश्व को निरन्तर प्रकाश और ताप देती रहती हैं।"

यदि समाज अपने अस्तित्व को बनाये रखना चाहता है तो इसके लिये आवश्यक है कि व्यक्तित्व के परम् या सर्वोच्च मूल्यों की नियमित रूप से पूर्ति करता रहे। सम्पूर्ण मानव समाज के कल्याण के लिये इन मूल्यों का संरक्षण आवश्यक है। यदि हम अपनी

सभ्यता और संस्कृति को सुरक्षित रखना चाहते हैं तो प्रत्येक परिवार एवं विद्यालय में धार्मिक व नैतिक शिक्षा को उचित स्थान मिलना चाहिये क्योंकि एक व्यक्ति अपने जीवन दर्शन, प्रेरणा और नैतिकता से आत्मिक बल प्राप्त करता है। सत्य, विनय, करुणा, क्षमा, स्नेह, सहानुभूति, आत्मनिर्भरता, निर्भकता, वीरता, आत्म-त्याग ये सारे नैतिक मूल्य एक व्यक्ति को चरित्रवान बनाते हैं। सद्गुणों को अपनाकर ही हमें सच्चा सुख प्राप्त हो सकता है। आज हमारा समाज नैतिक पतन की ओर जा रहा है यदि हर व्यक्ति सदाचार के महत्व को समझे और चरित्र-बल का विकास करे, स्वयं को समय दे, चिंतन-मनन करे और आत्मविश्लेषण करें, अपनी अन्तरात्मा की आवाज़ सुने, परिवार, मित्र, रिश्तेदारों के लिये समय निकाले व धार्मिक व नैतिक मूल्यों का महत्व समझाये तो एक-एक अच्छे व्यक्ति से एक अच्छा परिवार और एक-एक अच्छे परिवार से एक अच्छा समाज सुसंस्कृत देश की पहचान बनेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ

- ◆ Chaubey ,S.P.. **Child Development**, p.n. 27,289-299,306
<https://www.instantkhabar.com/item/29223-article>
- ◆ Jaiswal Sudha(1015) “नैतिक मूल्य: धर्म और हमारा समाज” <http://sudhajaiswal.jagranjunction.com>
- ◆ Kalra, Shakuntala(2007) “बच्चों में व्यक्तित्व विकास कैसे हो” Drishti Prakashan
- ◆ Lodha ,Mahavir (1996) “ नैतिक शिक्षा :विविध आयाम “ राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी ,जयपुर, प्रथम संस्करण , पृ.स. 1-10, 35-56,143-207
- ◆ Maclver&Page, “ Society:An Introductory analysis”,Mac Millan& Company'London(55) P.N. 238
- ◆ Prasad, C.B.(2011) “जीवन मूल्य:परम्परा और आधुनिकता”
<http://cmpershad.blogspot.in/2011/02/blog-post>
- ◆ Tomer ,Singh Neetu(2016) “मानवीय मूल्यों का नैतिक महत्व: एक सामाजिक विवेचन”
<https://www.instantkhabar.com/item/29223-article.html>
- ◆ “Indian family value system” WWW.iloveindia.com
- ◆ “The effect of family culture on family foundation” WWW.cof.org
- ◆ “What are Values” www.familylovetoknow.com

An insight to the link between Educators & Quality Enhancement in School Education

Mrs Aparajita Sengupta*

ABSTRACT

Education as a concept can have three aspects i.e. education as knowledge, education as a subject & education as a process. According to T.P Nunn "Education is the complete development of the individuality of the child so that he can make an original contribution to human life according to the best of his capacity". Education is considered to be the major tool of national development of any nation. Thus focus is on the wider spread of education, bringing more quality in education and that such educational opportunities reach to each and every individual of this country. To promote the enrolment, attendance as well as retention in schools the government came up with various programs & schemes. All the stakeholders in the education system share an equal responsibility in making functioning of the school education effective. The school educators play a vital role in augmenting the quality of school education. So for the fulfilment of the educational objectives; one of the key aspects to be considered for the teaching fraternity is their effective communication & leadership skills. Effective communication & leadership leads to effective schooling which in turn results in decrease in dropouts, increase in retention, universal enrolment, enhancing quality of education. So a case study has been conducted on /the National Awardee teachers who are given recognition by the MHRD and have acted as exemplary models for the entire teaching community. National awardee teachers are the biggest examples of individuals with good leadership skills. So if we are able to capture how these leaders have been able to execute their roles and task then we will be able to reveal to the education system how effective schooling can be managed thereby decreasing dropouts and increasing retention.

Keywords : National awardee teachers, School Educators, Quality education

1. Introduction

1.1 School Education

Education is vital for the holistic development of learners. One of the major task of school education is generation of good quality human resource which should be well equipped in every way. The Department of School Education & Literacy under the MHRD focuses on providing quality education by maintaining the equity amongst all learners in order to completely harness the potential of the learners. Hence it is very well said that education is indeed a tool for national development. The 12th five year plan also lays emphasis on the role of education in making transformations socially, politically and economically.

1.2 Quality Education

The quality of education provided in most institutions has remained stagnant, or has deteriorated. Although India has the highest number of Higher Educational institutes in the World; quality-wise we lag far behind almost all major countries. The Teacher Education Policy in India has progressed over a period of time based on the recommendations contained in various Reports of Committees/Commissions on Education, the important ones being the Kothari Commission (1966), the National Policy on Education (NPE 1986/92), Yashpal Committee

*Research Scholar, Rani Durgavati Vishwavidyalaya, Jabalpur, M.P.

(1993), and the National Curriculum Framework (NCF, 2009). All these policies have brought quality into limelight and have given various recommendations for improvement of quality in education. The National policy on education emphasised on the significance and need of a decentralised system for professional preparation of teachers. Quality can have various aspects which may include quality in terms of teaching, quality in terms of learning outcomes, quality in terms of education overall i.e. Total Quality Management (TQM). Total quality management is a wholesome term which refers to the quality as a whole; quality enhancement of all the stakeholders in educational process i.e. the learners, the educators, the institution as a whole.

1.3 Educational programs

To achieve the goal of universalisation of primary education the government came up with the RTE Act i.e. Right to Education Act, 2009. Various other programs and schemes were implemented like the 'National programme of Mid-day- Meal in schools' and the Sarva Shiksha Abhiyan (SSA) to promote the enrolment, attendance as well as retention in schools. For the enhancement of the access (enrolment) of the secondary education and improvement in its quality; the RMSA i.e. Rashtriya Madhyamik Shiksha Abhiyan was introduced. The National Scheme of incentives to girls for secondary education (NSIGSE) was introduced with the objective to create a learning environment in order to promote the enrolment and decrease the drop-out rates of girl students primarily belonging to the SC/ST communities of secondary schools.

1.4 Teaching learning process & Effective schooling

Teaching learning is the integral part of education. A positive learning and teaching environment is essential for student's achievement and well-being. Research shows a direct link between student's success and school environment in which learning takes place. Effective schooling practices include careful preplanning, effective classroom management and instruction, positive teacher-student interactions, attention to equity issues, and regular assessment. Through these practices teachers and students can achieve success. According to Nuland Van Shirley "Teacher management greatly affects teacher quality & ultimately schooling since the teacher's work and competence influence the quality of the educational outcomes. The school effectiveness is a tool to define the quality of education in that organisation". The extent of school effectiveness give an indication of the school improvement.

1.5 Role of Educators

Role of educators or teachers vary according to the different learning age groups of the children in schools. The proficiencies required by a teacher to teach learners of different age groups vary. (Maheshwari A.N) The teacher has to focus on imparting skills apart from that mentioned in the curriculum that is on holistic development of learners. The teacher's attitude or approach to teaching is a significant parameter for the success of the teaching learning process. It is also important how teachers relate to children and how easily they adopt the relevant changes in the teaching learning process as per the changing times.

When teachers have a positive attitude towards teaching and use variety of instructional strategies then it has a positive learning impact on the learners which can be observed in their achievements. Research has shown that such teachers have greater academic focus and prove to be successful educators. Innovative methods if used have the capacity to improve the teaching-learning process and hence the education system taking us a step ahead towards achievement of the goal of national development.

1.6 Communication & Leadership skills for Effective Education

A study conducted by Lakshminarayana U, Sindhe Rao A.S.N, Lalitha P.R, 1999 on 68 primary schools of Andhra Pradesh revealed that teacher motivation & their leadership had a significant role in improving the classroom

practices. Sasikala R, Venkatachalam R, Manoharan S, Mohan S carried out a case study with the aim of finding out the contribution of human resource management components to school effectiveness. The human resource management components include leadership, performance, relationship, organisational design. The findings showed that the leadership components had positive effect on school effectiveness.

Communication skills & Leadership of the educators has a direct impact on their self regulated learning. The better the communication & leadership skills they possess, the more organised and planned teaching strategies they would adopt and as a result it would directly improve the self learning abilities of these educators. This contributes to the professional development of these educators. This self regulated learning is based on the reflective practices of the educators. Buzza Dawn, Kotsopoulos Donna, Mueller Julie, Johnston Megan(2013) have explored the relationship between the self-regulated learning and reflections in teacher education by adapting a rubric designed to evaluate pre-service teacher's reflections to measure self regulated learning of these pre-service teachers.

1.7 The context

According to John Dewey "Education is not a preparation for life, rather it is the living. Education is the process of living through a continuous reconstruction of experiences. It is the development of all those capacities in the individual which will enable him to control his environment and fulfil his possibilities." So for the realization of the aims of education the key idea should be proper implementation of the various programs, schemes and policies to enhance the teaching-learning process. The better implementation of the various programs involves understanding the chief stakeholders of the teaching learning process ie the educators. It is vital to appreciate the role of educators in making the schooling an effective process. The school educators possess many traits; one of them being the leadership skills which plays a central role by directly impacting the professional development of educators and also the learning of the learners. Thus for the schooling to be effective the teacher must exhibit their leadership qualities in every manner so that they imbibe these leadership skills amongst their learners as well. So a case study was conducted on the national awardee teachers who are the exemplary role models of the leaders in the teaching community of the nation.

2. Objectives

The study was based on the following objectives :

1. To identify the innovative abilities of the national awardee teachers.
2. To study the approaches of teaching of the National awardee teachers.
3. To identify the genuine interests of National awardee teachers in the holistic development of children.
4. To analyse the involvement and contribution of the National awardee teachers to social life in community.
5. To analyse the perception of the national awardee teacher about his/her reputation and status in their school and community.
6. To explore the future academic plans of the National awardee teachers.

3. Research Methodology

A qualitative research methodology was adopted by the researcher involving study of a single human entity in order to identify the various human experiences of the subject by doing an in depth study. The researcher has selected a case based on the exemplary model. The researcher wanted to study the best or the most outstanding teacher in the schooling system. Thus, the researcher selected the National Awardee teacher who

is given recognition by the Ministry of Human Resource and Development (MHRD) and is nationally accepted as the best or outstanding teacher in his area of work. Purposive sampling techniques were used in this case study by the researcher. Based on the list of the national awardee teachers, two teachers were selected. The tools developed and used by the researcher for the case study were non-standardised i.e. questionnaire and interview schedule. The tools developed by the researcher were based on the research objectives. The questionnaire prepared was based on the guidelines as well as proforma given by the MHRD for the National awardee teachers. Number of items in the Questionnaire were 31 and the number of items in the Interview schedule were 41.

4. Results & discussion

According to the national awardee teachers:

- Genuine interest of the teachers is essential for an effective teaching learning process which motivates the learners all throughout. Teachers must take care of every learner with utmost sincerity to fulfil the true meaning of education.
- Whatever maybe the teaching strategy or the innovative practices used; it is important how that particular strategy is implemented and how it benefits the learners.
- The kind of teaching strategies like collaborative teaching, real life based teaching, activity based and interactive teaching, creating dynamic classroom environment are a few of the workable teaching strategies as suggested by the national awardee teachers.
- They emphasised on the use of critical pedagogy amongst the learners.
- Reflective practices along with self evaluation is a part and parcel of a good school educator.
- The educators must be resourceful in every manner and should set examples of leadership amongst the learners by constant motivation.
- The aim of the educators should be holistic all round development of the learners.
- The teachers must be socially active which can be possible only when they possess good communication & interpersonal skills and exhibiting leadership skills.
- The educators can emerge as leaders by giving a genuine feedback to the policymakers about various schemes and programs like the RTE & CCE.
- The educators must constantly strive for their professional development.

5. Conclusion

For effective schooling the educators must show genuine interest in the learners which will directly augment the teaching learning process. Results of the study reveal that teaching excellence which includes the academic efficiency and desire for improvement, reputation in school and community, genuine interest and love for children, involvement and social life and community play an effective role in the teaching-learning process. The National awardee teachers exhibited these qualities which has led them to have such accomplishments. They have put forth their experiences by letting the world know which strategies are actually more effective during teaching. They have revealed the kind of motivation that the teachers need to give to the learners by constantly motivating them through their good leadership and communication skills. If the learners feel motivated they tend to attend school more which ultimately leads to decrease in the drop out rates. This at the end leads to the achievement of the goal of Universalisation of primary, secondary education of the nation. Social activity of the teachers again shows their keenness or desire to attain more proficiency in their personality and also their genuine love for the children and individuals of this nation. It is a kind of holistic development of the teachers themselves which is essential for an effective teaching learning outcome and

ultimately an effective schooling. These strategies adopted by the national awardee teachers can be very well extended to the Higher education system and can be adopted by the entire teaching fraternity.

References & Bibliography

- Awasty Vinita, Choksi Archana, Dyer Caroline, Iyer Uma, Moyade Renu, Nigam Neerja , Purohit Neetu, Shah Swati & Sheth Swati .2004. District Institutes of Education and Training: A comparative study in three Indian states . Department for International Development, London ,UK. Retrieved from http://www.teindia.nic.in/Files/Research_on_TE/DIE&T.pdf
- Buzza Dawn, Kotsopoulos Donna, Mueller Julie & Johnston Megan. (2013). Exploring the Relationship between Self-Regulated Learning and Reflection in Teacher Education. *Journal of Teaching and Learning*. Vol9, No.1. Retrieved from file:///G:/aloy%20chem/academic%20auditing/jpc/3578-8713-3-PB.pdf
- Celik, K. (2013). The Relationship between Individual Innovativeness and Self efficacy Levels of Student Teachers. *International Journal of Scientific Research in Education*, 6(1), 56-67. Retrieved from <http://www.ij sre.com>
- Department of school Education and Literacy.(2015).MHRD. National Awards to teachers. Retrieved from http://mhrd.gov.in/national_teachers_awards
- Department of School Education and Literacy.Department of Higher Education MHRD, Government of India. 2014. Scheme of National award to teachers. Retrieved from http://mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/upload_document/SCHEME_OF_N.A.T..pdf
- Karunanatre Sunethra.(1999). Crushed among teacher guides and students in practice of teaching : guiding teacher learning, *Studies on Researches in school effectiveness at primary stage* , NCERT, pp. 206
- Maheshwari. A.N. Assessment and Accreditation in Determination and Maintenance of Norms and Standards for Teacher Education . *Quality Enhancement in Teacher Education* .Retrieved from <http://naac.gov.in/docs/Quality%20Enhancement%20in%20Teacher%20Education.pdf>
- Marius Boboc & R. D. Nordgren. (2014). Modern and Post-Modern Teacher Education: Revealing contrasts in Basic Educational Beliefs and Practice, *Journal of research in Innovative teaching* ,Volume 7, Issue1, publication of National University La Jolla ,CA, USA
- Padhi, J.S.(1999). Creative activities : A strategy towards learning achievement. *Studies on Researches in school effectiveness at primary stage* , NCERT, pg 171
- Rashtriya Madhyamik Shiksha Abhiyan, MHRD, Government of India.2012. Promoting innovations under RMSA : Guidelines . Retrieved from http://mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/upload_document/RMSA_INNOVATIONS_GUIDELINES.pdf
- Sengupta.M,(2012). Experiments in teacher education . *Journal of Indian Education* . Volume XXXVIII, No.2.pg 20 Retrieved from www.ncert.nic.in/publication/journals/pdf_files/JIE_AUG2012.pdf
- Scott Wurdinger. Jennifer Rudolph. Teaching Practices that Improve Student Learning: Five Experiential Approaches .*Journal of teaching and learning*, 2009, vol. 6, no. 1
- Shindhe A.S.N Rao, Lakshminarayana & U, Lalitha P.R.(1999).Motivation and classroom practices as indicators of school effectiveness, *Studies on Researches in school effectiveness at primary stage* , NCERT, pp 226

A Review of Research on Mobile devices in Attractive learning Devices for Teacher Education

Mr. Lokesh Patle*
Mrs. Shweta Singh**

ABSTRACT

Education and training is the process by which the wisdom, knowledge and skills of one generation are passed on to the next. Today there are two forms of education and training: conventional education and distance education. Mobile learning, or "M-Learning", offers modern ways to support learning process through mobile devices, such as handheld and tablet computers, MP3 players, smart phones and mobile phones. This document introduces the subject of mobile learning for education purposes. It examines what impact mobile devices have had on teaching and learning practices and goes on to look at the opportunities presented by the use of digital media on mobile devices. The main purpose of this paper is to describe the current state of mobile learning, benefits, challenges, and its barriers to support teaching and learning. Data for this paper were collected through bibliographic and internet research from January to March 2013. Four key areas will be addressed in this paper (a) there is an increasing trend in integrating mobile learning in teacher education contexts; (b) theoretical and conceptual perspectives are scarcely reported; (c) variations exist in perceptions, attitudes and usage patterns; (d) engagement with mobile learning and devices is primarily reported as being beneficial; (e) challenges were scarcely reported; and (f) several pedagogical affordances support mobile learning integration into teacher education settings. These findings have been interpreted to determine their implications on the development of mobile learning experiences in teacher education, including programmatic directions for integration and study.

KEYWORDS

Mobile learning, Teacher education, M-learning, Preservice, In-service

INTRODUCTION

The term M-Learning or "Mobile Learning", has different meanings for different communities, that refer to a subset of E-Learning, educational technology and distance education, that focuses on learning across contexts and learning with mobile devices. Mobile learning has many different definitions and is known by many different names, like M-Learning, U-Learning, personalized learning, learning while mobile, ubiquitous learning, anytime / anywhere learning, and handheld learning. One definition of mobile learning is, "any sort of learning that happens when the learner is not at a fixed, predetermined location, or learning that happens when the learner takes advantage of the learning opportunities offered by mobile technologies" Over the past two decades, technology devices have become mobile portable and networked to the point that they have become pervasive in everyday life. The use of mobile devices has become common among a wide range of age groups due to affordability and availability (Newhouse, Williams, & Pearson, 2006). Significant investments have been made to provide infrastructure, content, and resources related to the integration of mobile devices into learning environments (Johnson, Smith, Willis, Levine, & Haywood, 2011), and researchers have long had an interest in this evolving landscape (Kukulka-Hulme, Sharples, Milrad, Arnedillo-Sánchez, & Vavoula, 2009).

* Asst. Prof., Department of Education Sardar Patel college of Technology, Balaghat, MP

** Asst. Prof., Department of Education Sardar Patel college of Technology, Balaghat, MP

However several limitations exist, such as lack of theoretical and pedagogical underpinnings, sustainable integration into formal educational contexts, and, particularly, lack of teacher support and training (Cochrane, 2012; Peng, Su, Chou, & Tsai, 2009).

This review aims to fill a gap in the current research on mobile learning. Previous literature reviews have synthesized trends and provided analysis of findings (Hwang & Tsai, 2011; Hung & Zhang, 2012), but no systematic research has been conducted on mobile learning and teacher education. This is the first review to initiate an evidence-based discussion on mobile learning and related emerging pedagogical directions in teacher education.

MOBILE LEARNING AND THEORETICAL PERSPECTIVES

The diversity of the research on mobile learning has made it difficult to generate a single definition or to determine generally added benefits (Frohberg, Göth, & Schwabe, 2009; Sharples, Arnedillo-Sánchez, Milrad, & Vavoula, 2009). While it is typical for an emerging field to have varied definitions, the lack of conceptual frameworks and robust theories has been frequently addressed as a concern in the literature (Peng et al., 2009). Definitions of mobile learning emphasize mobility (Sharples et al., 2009), access (Parsons & Ryu, 2006), immediacy (Kynäslähti, 2003), situativity (Cheon, Lee, Crooks, & Song, 2012), ubiquity (Kukulka-Hulme et al., 2009), convenience (Kynäslähti, 2003), and contextuality (Kearney, Schuck, Burden, & Aubusson, 2012). According to Sharples et al. (2009), mobile learning includes the characteristics of mobility in physical, conceptual, and social spaces. The “relationship between the context of learning and context of being” is unique to mobile learning, as learning may occur in independent, formal, or socialized contexts (Frohberg et al., 2009, p. 313).

The greatest added value of mobile learning vis-a-vis PC learning lies in the aspects that extend classroom interaction to other locations via communication networks. Recent advances such as imbedded sensors, cameras, motion detection, location awareness, social networks, web searching, and augmented reality present the potential to foster learning and engagement across multiple physical, conceptual, and social spaces, both indoors and out (Newhouse et al., 2006). Mobile learning enables teachers and learners ubiquitous and seamless access to information (Kukulka-Hulme et al., 2009; Seppälä & Alamäki, 2003), and convenience, expediency, and immediacy are valuable to teachers and enhance students' learning (Kynäslähti, 2003). These features provide opportunities for individualized, situated, collaborative, and informal learning without being limited to classroom contexts (Cheon et al., 2012). While portability and mobility have already made these devices attractive tools, search capabilities, image and video capture and context awareness have further increased their versatility by promoting situated learning experiences and allowing exploration within authentic settings, particularly supporting inquiry-based learning (Martin & Ertzberger, 2013).

While the majority of research on mobile learning has focused primarily on students, recently teachers and researchers have started exploring the potentials of mobile learning and devices within teacher education. By synthesizing the literature on mobile learning and teacher education, this research aimed to address the trends and gaps observed in order to determine current implementation practices.

RESEARCH METHODS

Educational research syntheses demonstrate important interactions and connections from existing literature and offer conclusions or build theories for further research and practice (Minner, Levy, & Century, 2010). Given the methodological diversity of educational research on mobile learning in teacher education,

this review is a qualitative synthesis of quantitative and qualitative research. Qualitative research syntheses can be defined as, “[S]ystematic efforts of synthesizing qualitative research” (Suri & Clarke, 2009, p. 401). This research synthesis departed from a strictly positivist, meta-analytic approach to syntheses, with its promotion of, “[T]ransparency of process to enhance accountability, credibility, and transferability of synthesis findings” (Suri & Clarke, 2009, p. 413) as suggested for research syntheses primarily qualitative in nature.

The synthesis followed three distinct phases: search and inclusion, individual study review, and cross-study comparison and analysis. Phase 1 involved searching for keywords “mobile learning” and “teacher education” or “mobile learning” and “teacher” or “mobile” and “teacher” in academic journals in the ERIC and Education Research Complete databases, and this search yielded 92 results. In the second round of search, the search terms “teacher education” and “mobile learning” were applied to Google Scholar and the following primary research journals: Journal of Educational Technology and Society, Computers and Education, British Journal of Educational Technology, Journal of Computer Assisted Learning, Educational Technology Research and Development, Journal of Computing in Teacher Education, Journal of Technology and Teacher Education, Journal of Research on Technology in Education, Journal of Digital Learning in Teacher Education. Moreover, references in each of the identified articles were checked for related work. As of August 2014, 237 new articles were thus identified from this search, resulting in a new total of 329 articles. The articles were organized and coded according to their context (e.g., preservice teacher education, in-service teacher education, professional development, K12 classrooms), and type (e.g., empirical, theoretical, case description, editorial, policy).

For the final tally of articles for the research synthesis, inclusion criteria were applied to ensure the articles included: (a) empirical research on mobile learning in preservice and in-service teacher education contexts across different disciplines (e.g., social studies, literacy, and math); (b) applications of mobile technologies (smartphones, tablets) in a teacher education context; (c) in-service teacher, preservice teacher, or teacher educator participants; and (d) publication in a peer-reviewed journal, rather than a technical reports, project anecdote, or similar proceeding. Studies on preservice and in-service teachers' perceptions of mobile learning were also included to present the current landscape surrounding the use of these technologies as teaching tool. Because the aim was to investigate empirical research on mobile learning in teacher education contexts, these exclusion criteria significantly decreased the number of articles to more articles were also eliminated because they presented a theoretical or conceptual work on mobile learning and not empirical research. Two articles that lacked the descriptions of their research methodologies were included in the list because they provided anecdotal evidence regarding mobile learning and its implications in teacher education and helped to broaden the focus of this review.

Phase 2 included an analysis of the remaining 37 articles. The articles were subsequently examined and coded with notations in an analytic research synthesis table including the meta-categories of teacher education context, country context, subject domain, type, definition of mobile learning, reliability, validity and trustworthiness reports, mobile technologies used, outcomes in terms of teacher knowledge and practice, and pedagogical approaches. Notations related to methodology, such as the study's purpose, data sources, and participant information were included in the analytic table to foster comparisons among the studies (see Table 1).

Phase 3 of the research included a comparison of the studies within the identified categories. The data were further investigated “to consider themes, shapes, and organization of research ideas present in the

overall literature" (Opfer & Pedder, 2011, p. 383). Following themes emerged that captured variations and commonalities: Trends, perceptions, attitudes and usage patterns, benefits and challenges of mobile learning, and practices within teacher education contexts. The findings below report on these comparisons with conclusions representing the research synthesis and implications.

Table 1.

An analysis of studies on mobile learning and teacher education (n = 37)

Study	Subject Domain	Subjects	Type	Method	Data sources	Reliability, validity, trustworthiness report	Technology used	Country context
Price et al. (2014)	Science	Preservice teachers	Implementation	Design based research	Observation, video, interviews	Smartphone	UK	Price et al. (2014)
Ekanayake & Wishart (2014)	Science	In-service teachers	Implementation	Case study	Observations via video, audio recording and field notes	*	Mobile phone	Sri Lanka
Kafyulilo (2014)	Mix	Preservice teachers In-service teachers	Survey	Mixed method	Questionnaires, interviews	*	Mobile phone	Tanzania
Husbye & Elsener (2013)	Literacy	Preservice teachers	Implementation	Case description	--	Tablet, smartphone, laptop	U.S.A.	Husbye & Elsener (2013)
Herro, Kiger, & Owens (2013)	Mix	Teacher educators	Implementation	Case description	--	iPod, iPad	U.S.A.	Herro, Kiger, & Owens (2013)
İsmail, Azizan, & Azman (2013)	Information Technology	In-service teachers	Survey	Quantitative	Questionnaire	*	Mobile phone	Malaysia
Serin (2012)	Mix	Preservice teachers	Survey	Mixed methods	Questionnaire	*	Mobile technology	Turkish
Burton et al. (2011)	STEM	Preservice teachers	Implementation	Mixed methods	Pre-post test, cell phone attitude survey	*	Mobile phone	U.S.A.

Mahruf, Shohel, & Power (2010)	English Language Teaching	In-service teachers	Implementation	Mixed methods	Survey, classroom observation, interviews		iPod	Bangladesh
Aubusson, Schuck, & Burden (2009)	Mix	In-service teachers, teacher advisors and developers	Survey	Qualitative	Interview		Mobile phone	Cross country (Australia, UK)
McCaughey & Dillon (2008)	Physical education	Preservice teachers	Implementation	Interpretative ethnographic	Fieldwork journals, observation, interviews	*	PDA	U.S.A.
Franklin, Sexton, Lu, & Ma (2007)	Mix	Preservice teachers	Implementation	Qualitative Case study	Weekly journals, pre-post survey of technology skills, classroom observation,		PDA	U.S.A
Gado, Ferguson, & van't Hooft (2006)	Science	Preservice teachers	Implementation	Mixed methods	Interviews, student reflection reports, journals, observations of peer teaching, questionnaire	*	PDA	U.S.A.

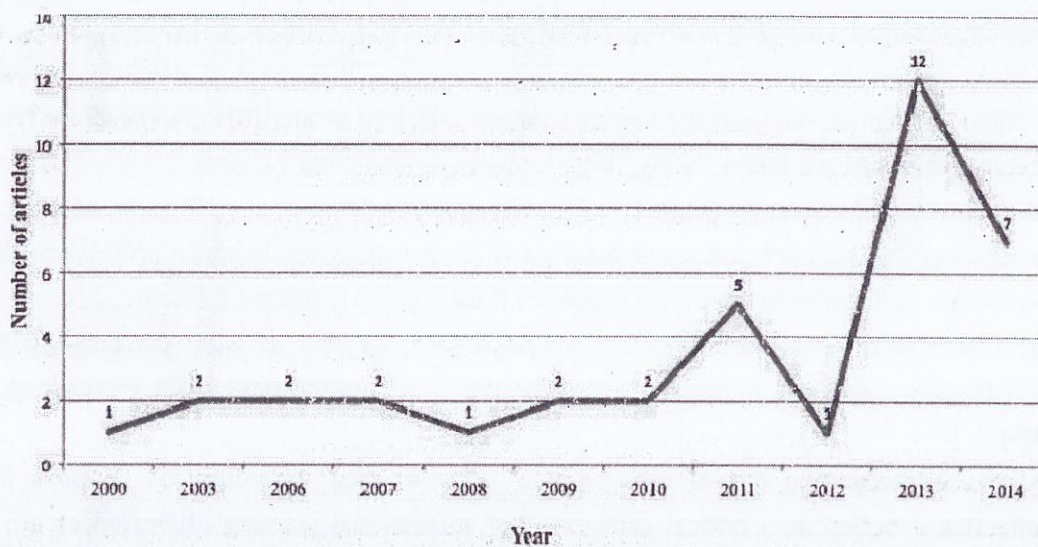
FINDINGS

Several main findings emerged as a result of the research synthesis of the selected articles on mobile learning and teacher education, outlined below in terms of trends, theoretical perspectives, perceptions, attitudes, and usage patterns, benefits, challenges, and teacher education contexts.

TRENDS IN THE MOBILE LEARNING AND TEACHER EDUCATION LITERATURE

The articles examined were bound within the period, between 2000 and the first half of 2014, when research on emerging mobile technologies in education was burgeoning. As illustrated in Figure 1, in the last two years more than 50% of the articles from the period 2000-2014 have been published. Consistent with the widespread usage of mobile tools, researchers and teacher educators have showed an increasing interest in the integration of mobile technologies into teacher education contexts. As shown in Table 1, almost 38% of the research on mobile learning was conducted in the U.S. A teacher education contexts followed by Australia (n = 3) and Finland (n = 3). It is especially noteworthy that more countries contributed to the mobile learning research in teacher education in recent years, such as Malaysia, Canada, Singapore, UK and Tanzania.

Figure 1. Publication trends from 2000 to 2014



The studies examined in this review used varied methodologies, with a majority being case studies or mixed method. Of the 37 studies, 21 were conducted within preservice teacher education contexts, 10 within in-service teacher education context, four within teacher educators' contexts, one in both preservice and in-service teacher education contexts, and one in a coaching context. As shown in Figure 2, the majority of the studies crossed content areas, except five studies on science, three on math, three on literacy, two on physical education, one on information technology, one on STEM teacher education, one on English language teaching, and one on home economics teacher education

MOBILE LEARNING IS REPORTED AS MAINLY BENEFICIAL

The literature on mobile learning and teacher education generally considered mobile learning a beneficial approach in extending teachers' learning experiences and enhancing their mobile technology integration skills. The literature identified several motivating factors for the integration of mobile learning into preservice

teacher education settings, such as modeling mobile pedagogies (Burton et al., 2011; Cushing, 2011; Foulger et al., 2013; Franklin et al., 2007; Gado et al., 2006; Herro et al., 2013; McCaughtry & Dillon, 2008), deeper explorations of content areas (Gado et al., 2006; Husbye & Elsener, 2013; Kearney & Maher, 2013; Mahruf et al., 2010; McCaughtry & Dillon, 2008; Shotsberger, 2003; Burton et al., 2011), enhancing preservice teachers' mobility (Coens et al., 2011; Husbye & Elsener, 2013), connecting preservice teachers with a larger community (Cushing, 2011; Husbye & Elsener, 2013; Kearney & Maher, 2013), providing preservice teachers with personalized learning experiences (Kommers, 2009), enhancing social interaction (Järvelä et al., 2007; McCaughtry & Dillon, 2008; Valtonen et al., 2011), presenting alternative assessment techniques (Chen, 2010), and promoting collaborative knowledge construction (Järvelä et al., 2007).

Studies that investigated the use of mobile learning or mobile tools in teacher education contexts mainly reported positive contributions to the outcomes investigated. Mobile tools were found to have potential for helping preservice teachers understand and develop new literacies (Husbye & Elsener, 2013), explore mathematics in the real world (Kearney & Maher, 2013; Shotsberger, 2003), conduct scientific investigations (Gado et al., 2006), engage in rich language learning contexts (Mahruf et al., 2010); and explore real world physical education (McCaughtry & Dillon, 2008). These tools can fundamentally change the way classrooms are organized within teacher education programs by increasing mobility (Price et al., 2014). Another advantage reported was features that connect preservice teachers to their colleagues, enhance professional learning through collaboration, and facilitate mentoring processes (Cushing, 2011; Husbye & Elsener, 2013; Kearney & Maher, 2013). Mobile tools could help build closer relationships as well as more personalized learning experiences for teacher candidates as needs change over time (Crippen & Brooks, 2000; Herro et al., 2013; Kommers, 2009).

Advantages in integrating mobile learning into in-service teacher education contexts included promoting reflection-in-action as a critical component of professional learning (Aubusson et al., 2009); providing timely access to resources (Shotsberger, 2003); allowing participation in knowledge production and sharing regarding teaching practices (Aubusson et al., 2009); and capturing, reflecting upon, and sharing experiences (Aubusson et al., 2009). Identified mobile learning initiatives in teacher education programs and critical success factors as well as challenges.

MOBILE LEARNING PRACTICES WITHIN TEACHER EDUCATION CONTEXTS

The analysis of mobile learning practices within the studies revealed approaches with different goals based on audience. Three groups participated in the studies: preservice teachers, in-service teachers, and teacher educators.

INTEGRATING MOBILE LEARNING INTO PRESERVICE TEACHER EDUCATION

Preservice teacher education programs and courses were the most common research contexts in the literature (e.g., Husbye & Elsener, 2013). Additionally, studies were conducted in the context of projects that included preservice teachers as participants of the studies (e.g., Schuck et al., 2013) and postgraduate teacher

education certification programs (e.g., Price et al., 2014). The research synthesis revealed many pedagogical advantages of mobile learning in preservice teacher education: connectivity and collaboration, flipped classroom models, mobility within the physical space of the classroom, backchannel conversations, engaging with content on mobile devices, mobile learning in student teaching, performance evaluation, and participation in PLCs.

Mobile tools have capabilities of capturing real time information and integrating connectivity and collaboration into class activities. For example, Husbye and Elsener (2013) integrated mobile phones into early childhood literacy courses using QR codes to index videos of children reading to help preservice teachers move at their own pace. Mobile devices' connection capabilities also provided opportunities to share preservice teachers' products (e.g., teaching videos) on the web (Husbye & Elsener, 2013; Schuck et al., 2013). Similarly, Järvelä et al. (2007) used a mobile mind map tool to co-regulate preservice teachers' collaborative knowledge construction, as mobile devices "supported externalization of knowledge representations in individual and collaborative levels" (p. 71). Mobile devices allow for mobility within and beyond the classroom's physical spaces. Another example shared by Husbye and Elsener (2013) was digital gallery walks, where students accessed web resources linked to QR codes on posters in class. Other examples included podcasts in contexts such as botanical gardens (Schuck et al., 2013) and capturing real life math phenomena (Kearney & Maher, 2013). Burton et al. (2011) implemented an augmented reality (AR) mobile game to enhance preservice teachers' self-efficacy and attitudes towards integrating AR pedagogies in future STEM classrooms. Following the participatory design approach, Price et al. (2014) designed the GeoSciTeach smartphone application to support preservice science teachers' awareness of the integration of geospatial ideas into science. Mobility, combined with other emerging features such as augmented reality and context awareness, helped facilitate contextualized and situated learning experiences.

The timely communication afforded by mobile devices could transform a class conversation from one-to-many to many-to-many and increase students' engagement via backchannel conversations. Teacher educators integrated mobile devices into courses where preservice teachers shared their understanding of content and participated in conversation online. Husbye and Elsener (2013), for example, used class-specific hashtags on Twitter, where students discussed class activities, commented on classroom experiences, and shared resources for best teaching practices. Similarly, Valtonen et al. (2011) used mobile devices in teacher education courses to enable students to capture and share lecture notes via social software, while Järvelä et al. (2007) used a mobile lecture interaction tool to enhance participation during lectures. Finally, Schuck et al. (2013) conducted activities where preservice teachers voted through text messages or "quick response" voting applications.

MOBILE LEARNING WITH IN-SERVICE TEACHERS

Among 11 studies that investigated in-service teachers, only four of them implemented professional

development programs on mobile learning, while others focused on surveying teachers' perceptions and attitudes towards mobile devices and mobile learning. Mobile learning research conducted within in-service teacher education contexts focused on their experiences using mobile technologies for their own learning (Aubusson et al., 2009; Hashim, 2014), the impact of mobile learning professional development programs on effective integration of mobile devices into classrooms (Ekanayake & Wishart, 2014; Mahruf et al., 2010), and perceptions regarding the use of mobile devices (Aubusson et al., 2009; Ciampa, 2014; Uzunboylu & Özdamlı, 2011). Mobile learning holds promises for creating mobile, collaborative, contextualized, customized, and personalized learning opportunities for teachers. Aubusson et al.'s (2009) interviews with eight teachers, teacher developers, and teacher advisors in Australia and the UK revealed that educators considered mobile technology as beneficial for enhancing on the job learning.

To equip in-service teachers with the skills for effective integration of mobile devices, researchers conducted professional development programs and assessed their effectiveness. Such programs included the design of a series of workshops for secondary science teachers (Ekanayake & Wishart, 2014) and mobile access to development resources for English teachers (Mahruf et al., 2010). Ekanayake and Wishart's (2014) analysis of paper-based materials and audio and video recordings revealed that their workshops increased awareness of and response toward the potential benefits of science teaching and learning with mobile phones, helped develop pedagogical actions, and encouraged sharing knowledge related to technology integration. In another project, teachers watched and listened to material on iPods and other mobile devices (Mahruf et al., 2010). Interviews with participants revealed that accessing professional development resources via mobile devices helped them engage in new settings and develop pedagogical knowledge and English-language proficiency.

MOBILE LEARNING WITH TEACHER EDUCATORS

With the widespread use of mobile devices, teacher educators are expected to show more interest in testing the strategies for implementing mobile devices in their courses and professional development programs. Methods for preparing teacher educators for mobile learning included PLCs (Schuck et al., 2013) and literacy coaching practices (Bates & Martin, 2013). Using design-based research, Schuck et al. (2013) employed a PLC to support teacher educators in understanding advantages of mobile learning within teacher education and model good practices to preservice teachers. Their results revealed the need for distinction between mobile learning and mobile usage, as well as the necessity for exploring the pedagogical potentials of mobile technologies (Schuck et al., 2013). In another study, tablets were integrated into literacy coaching practices and classroom observations (Bates & Martin, 2013). Hargis et al. (2013) conducted observations, interviews, and surveys with faculty members who received training on iPads and found that iPads supported student-centered teaching. In another study, teacher educators collaboratively redesigned their coursework to emphasize "(a) assessing the value of mobiles in instruction, (b) pedagogical approaches, (c) content creation, (d) evaluation of apps, and

(e) learner impact” (Herro et al., 2013, p. 35).

While faculty development is considered critical in adopting mobile learning practices in teacher education, only a limited number of studies examined teacher educators' practice and training about mobile learning. Teacher education programs can initiate mobile learning systems in collaboration with K-12 schools by implementing “visionary leadership, professional development, scalable pilot programs, and adequate resources” (Herro et al., 2013, p. 36).

Overall, this review captured the methods for integrating mobile learning into teacher education contexts. Mobile in teacher education contexts aimed to (a) teach teachers how to integrate mobile tools into their classrooms, and to (b) enhance teacher learning with mobile learning. Figure 3 summarizes these methods.

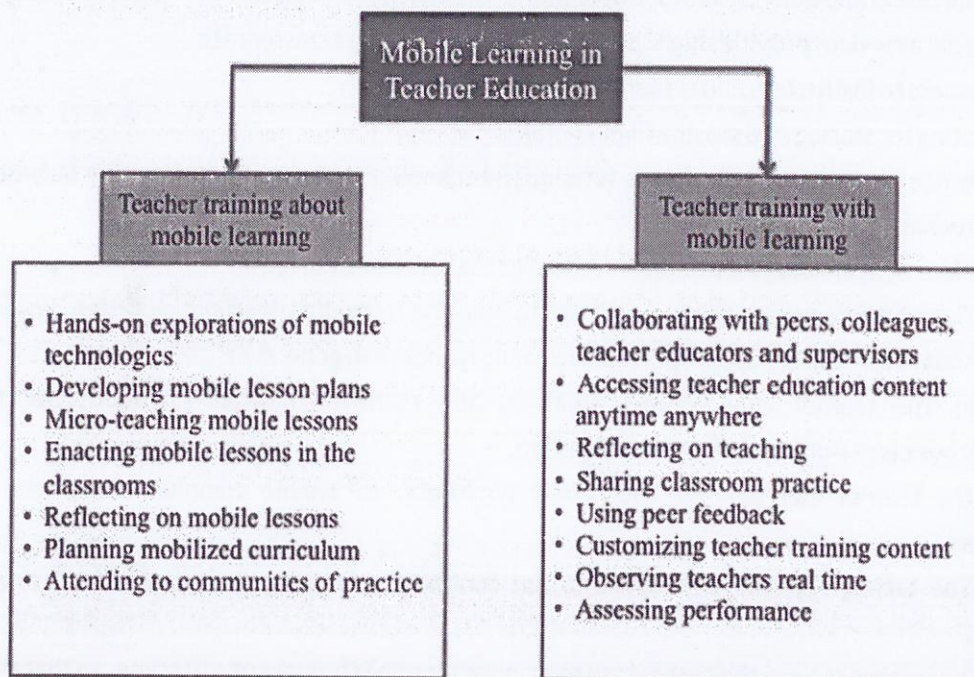


Figure 3. Methods for integrating mobile learning into teacher education

MOBILE TECHNOLOGIES FOR M-LEARNING

Mobile technologies are an attractive and easy means to maintain literacy skills and gain constant access to information. They are affordable, can be easily distributed and thus hold great potential for reaching marginalized groups and providing them with access to further learning and development. Mobile technologies facilitate distance learning in situations where access to education is difficult or interrupted because of geographical location or due to post-conflict or post-disaster situations. Mobile devices and personal technologies that can support mobile learning include:

- E-book
- Out start, Inc.
- Handheld audio and multimedia guides, in museums and galleries
- Handheld game console, modern gaming consoles such as Sony PSP or Nintendo DS
- Personal audio player, e.g. for listening to audio recordings of lectures (podcasting)
- Personal Digital Assistant, in the classroom and outdoors
- Tablet computer
- UMPC, mobile phone, camera phone and Smart Phone

Technical and delivery support for mobile learning include:

- 3GP For compression and delivery method of audiovisual content associated with Mobile Learning
- GPRS mobile data service, provides high speed connection and data transfer rate
- Wi-Fi gives access to instructors and resources via internet
- Cloud computing for storing and sharing files

And also, We need baseline requirements for mobile technologies that support learning outside of school settings. These technologies should be:

- 1) **Highly portable:** The technology is available whenever the user needs to learn.
- 2) **Individual:** The technology can be personalized to suit the individual learner's abilities, knowledge and learning style, and is designed to support personal learning rather than general office work.
- 3) **Unobtrusive:** The learner can capture situations and retrieve knowledge without the technology becoming overly noticeable or imposing on the situation.
- 4) **Available:** The learner can use the technology anywhere, to enable communication with teachers, experts and peers.
- 5) **Adaptable:** The technology can be adapted to the context for learning and the learner's evolving skills and knowledge.
- 6) **Persistent:** The learner can use the technology to manage learning throughout a lifetime, so that the learner's personal accumulation of resources and knowledge will be immediately accessible despite changes in technology.
- 7) **Useful:** The technology is suited to everyday needs for communication, reference, work and learning.
- 8) **Easy to use:** The technology is easily comprehended and navigated by people with no previous experience using it.

CONCLUSIONS

This systematic review of 37 articles on mobile learning and teacher education is timely in light of growing interest in mobile learning and a lack of syntheses in the context of teacher education. Findings are drawn as well as the approaches and strategies for implementing mobile learning and mobile tools in different teacher education contexts. First, the review revealed that the number of articles published has significantly increased

over the last five years, with contributions from researchers around the world. This trend is consistent with other review findings on mobile learning (e.g., Hwang and Tsai, 2011; Wu et al., 2012). Second, there was a scant report of theoretical and conceptual perspectives. Third, survey studies revealed that perceptions, attitudes and usage patterns among teachers varied. Fourth, mobile learning was reported as mainly beneficial in teacher education contexts. Fifth, while there are notable exceptions, challenges or issues to integrate a mobile learning component in teacher education programs and curriculum were duly noted. Finally, several pedagogical affordances support mobile learning integration into teacher education settings. As educators begin to understand the potential of mobile learning in education, the role of teachers and teacher educators in integrating mobile devices becomes essential in addressing students' learning needs across several disciplines. This study presents findings and recommendations to help researchers, teacher educators, and policy makers develop research-informed guidelines and theoretical models to suggest methods on how to integrate mobile learning into teacher education.

REFERENCES

1. Aubusson, P., Schuck, S., & Burden, K. (2009). Mobile learning for teacher professional learning: Benefits, obstacles, and issues. *ALT-J, Research in Learning Technology*, 17(3), 233-247.
2. Bates, C. C., & Martin, A. (2013). Using mobile technology to support literacy coaching practices. *Journal of Digital Learning in Teacher Education*, 30(2), 60-66.
3. Chen, C. (2010). The implementation and evaluation of a mobile self- and peer-assessment system. *Computers & Education*, 55(1), 229-236.
4. Ciampa, K. (2014). Learning in a mobile age: An investigation of student motivation. *Journal of Computer Assisted Learning*, 30(1), 82-96.
5. Ekanayake, S. Y., & Wishart, J. (2014). Integrating mobile phones into teaching and learning: A case study of teacher training through professional development workshops. *British Journal of Educational Technology*. doi: 10.1111/bjet.12131
6. Foulger, T. S., Burke, D., Williams, M. K., Waker, M. L., Hansen, R., & Slykhuis, D. A. (2013). Innovators in teacher education: Diffusing mobile technologies in teacher preparation curriculum. *Journal of Digital Learning in Teacher Education*, 30(1), 21-29.
7. Gado, I., Ferguson, R., & van 't Hooft, M. (2006). Using handheld-computers and probeware in a science methods course: Preservice teachers' attitudes and self-efficacy. *Journal of Technology & Teacher Education*, 14(3), 501-529.
8. Hargis, J., Cavanaugh, C., Kamali, T., & Soto, M. (2013). Measuring the difficult to measure: Teaching and learning with an iPad. *International Journal of Mobile and Blended Learning*, 5(2), 60-77.
9. Ismail, I., Azizan, S. N., & Azman, N. (2013). Mobile phone as pedagogical tools: Are teachers ready. *International Education Studies*, 6(3), 36-47.
10. Järvelä, S., Näykki, P., Laru, J., & Luokkanen, T. (2007). Structuring and regulating collaborative learning

in higher education with wireless networks and mobile tools. *Educational Technology & Society*, 10(4), 71-79.

11. Kafyulilo, A. (2014). Access, use and perceptions of teachers and students towards mobile phones as a tool for teaching and learning in Tanzania. *Education and Information Technologies*, 19(1), 115-127.
12. Looi, C., Sun, D., Seow, P., & Chia, G. (2014). Enacting a technology-based science curriculum across a grade level: The journey of teachers' appropriation. *Computers & Education*, 71, 222-236.
13. Mahruf, C., Shohel, C., & Power, T. (2010). Introducing mobile technology for enhancing teaching and learning in Bangladesh: Teacher perspectives. *Open Learning: The Journal of Open, Distance and e-Learning*, 25(3), 201-215.
14. Newhouse, C. P., Williams, P. J., & Pearson, J. (2006). Supporting mobile education for pre-service teachers. *Australasian Journal of Educational Technology*, 22(3), 289-311.
15. O'Bannon, B. W., & Thomas, K. (2014). Teacher perceptions of using mobile phones in the classroom: Age matters. *Computers & Education*, 74, 15-25.
16. Price, S., Davies, P., Farr, W., Jewitt, C., Roussos, G., & Sin, G. (2014). Fostering geospatial thinking in science education through a customisable smartphone application. *British Journal of Educational Technology*, 45(1), 160-170.
17. Sad, S. N., & Göktas, Ö. (2013). Preservice teachers' perceptions about using mobile phones and laptops in education as mobile learning tools. *British Journal of Educational Technology*. doi:10.1111/bjet.12064
18. Thomas, K. M., O'Bannon, B. W., & Bolton, N. (2013). Cell phones in the classroom: Teachers' perspectives of inclusion, benefits, and barriers. *Computers in the Schools*, 30(4), 295-308.
19. Uzunboyulu, H., & Özdamly, F. (2011). Teacher perception for m-learning: Scale development and teachers' perceptions. *Journal of Computer Assisted Learning*, 27(6), 544-556.
20. Valtonen, T., Havu-Nuutinen, S., & Dillon, P., & Vesisenaho, M. (2011). Facilitating collaboration in lecture-based learning through shared notes using wireless technologies. *Journal of Computer Assisted Learning*, 27(6), 575-586.

Comparative Study of Personality of Under graduate Day Scholar and Hostellers of Rani Durgawati Vishwavidyalaya, Jabalpur

Dr. Nivedita Paul*

ABSTRACT

The objective of the present study was to compare the personality of day scholars and hostellers studying in undergraduate classes. 52 day scholars and 52 hostellers were selected for the study of science and arts faculties. Introversion Extroversion test by Aziz & Agnihotri was used. The data was analyzed using Chi-square test. The result show that there was no impact of nature of residence on personality of science & arts students. So also, there was no impact of subject being studied on personality of day scholars & hostellers.

Keyword: Personality of Day Scholar and Hostellers under graduate students.

Introduction:

Personality of an individual is an identity that is moulded by many factors like- socialization, training, life experience, social perception and education. The structure in which a person acquires education also have a strong impact on the development of a person's personality. The personality of human are based on the psychological, affection and the bodily aspect of an organism, which are of comparable significance and worth. The important aspect of educational life is the place of residence during that phase. An individual behaviour is not predetermined, rather it is based on his/her preferences. Education has three factors - the material which is planned to learn, environmental condition and subject readiness. Student residing in hostel comes across many people of different states and caliber which makes their behaviour straight forward, learn to live independently and joyful life with absolute maturity at an early age. Investigations also depicts that hostellers suffers from social impairment and mood disorder, but in long run it is difficult to eliminate the adverse effect of boarding life. Along with the other factors impact of residential care and environment on personality development has been studied suggesting that those students who live at their homes with their family members are more emotionally stable and confident as compared to the hostellers. Residential care has a great impact on personality development as observed in hostellers experiences too many problems which results in emotional disorder. Emotional maturity also plays on important role in the development of student personality. As the students are the pillars of the future generation their emotional maturity is vital due to which they will be in a position to train the child in future. This study is conducted to analyze the personality dynamics of day scholar & hostellers which can be applied to improve their future lives.

* Professor, Jabalpur Public College, Karmeta Jabalpur (M.P.)

'Personality is the sum total of innate and acquired dispositions.' - Valentine

'Personality is a dynamic organization within the individual of those psycho-physical systems that determine his unique adjustment to his environment.' - Allport

The purpose for conducting the study was to describe personality types as predictors of collegiate success. Personality type referred to a system for understanding human behaviour. It is based upon the belief that there are 16 distinctly different personality types, and every person has one type that most accurately describes him or her (Miller, 2007).

In psychological terms, personality refers to our characteristic ways of responding to individuals and situations. People can easily describe the way in which they respond to various situations. Certain terms like shy, sensitive, quiet, concerned, warm, etc. are often used to describe personality. These words refer to different components of personality. In this sense, personality refers to unique and relatively stable qualities that characterize an individual's behavior across different situations over a period of time. If you watch closely, you will find that people do show variations in their behavior. One is not always cautious or impulsive, shy or friendly. Personality characterizes individuals as they appear in most circumstances. Consistency in behavior, thought and emotion of an individual across situations and across time periods characterizes her/his personality. For example, an honest person is more likely to remain honest irrespective of time or situation. However, situational variations in behavior do occur as they help individuals in adapting to their environmental circumstances once we are able to characterize someone's personality, we can predict how that person will probably behave in a variety of circumstances. An understanding of personality allows us to deal with people in realistic and acceptable ways. For example, if you find a child who does not like orders, the most effective way to deal with that child will be not to give orders, but to present a set of acceptable alternatives from which the child may choose. Similarly, a child who has feelings of inferiority needs to be treated differently from a child who is self-confident.

Research has revealed that extroverts find it more appealing to work actively with objects or other people. Introverts are more intrigued by work that involves ideas and in which much of their activity takes place inside their heads. Although everyone lives partly in the extrovert's world of people and things and partly in the introvert's world of concepts and ideas, most people are consciously more at home in one of those worlds and do their best work in the preferred environments (Alig; 1994).

The model of personality type is non-judgmental. There are no better or worse, healthier or sicker types. Each type has its own inherent strengths and potential weaknesses. Personality type does not predict intelligence; rather it identifies important natural predispositions and tendencies (Miller, 2007). Practical outcomes of the study include a better understanding of the types of students that persist with their coursework or graduate from Rani Durgawati University. Such knowledge is useful for the development and improvement of student's personality.

The study made us realize that the students who stay in hostel become self-disciplined and focused towards their aims of life and they do extremely well but at times hostellers become adamant, arrogant, over confident and thus may mislead themselves from the right path. Therefore parents should give frequent visits and talk to the authority who are responsible for taking care of their wards.

On the other hand it has been found that day scholar suppress their character, this suppression is, may be, because of the parents constant advices and watch. A proper counselling should be given as and when required to the parents as well as the students. Irrespective of day scholar and hostellers proper yoga and meditation should be initiated for the teachers and the students.

The present study deals with finding out the difference in personality of day scholars and hostellers so that guidance and counseling may be given to students for amicable personalities so that it does not come in the way of their studies and achievement and ultimately in their selection of a proper vocational career.

OBJECTIVES:

1. To study the impact of nature of residence (day scholar/hosteller) on personality of science and arts faculty students.
2. To study the impact of faculty (Science/Arts) on personality of day scholars and hostellers.

HYPOSTHESIS:

1. There is no impact of nature of residence on personality of science and arts faculty students.
2. There is no impact of faculty on personality of day scholars and hostellers.

SAMPLE:

Undergraduate students of science and arts faculties have been selected for study as shown below:

Nature of Residence	Science	Arts	Total
Day Scholars	26	26	52
Hostellers	26	26	52
Total	52	52	104

TEST: Introversion-Extroversion Test - Dr.P.F.Aziz and Mrs. Rekha Agnihotri

METHOD:

Introversion-Extroversion Test was administered on the sample selected for study in small group. After solving the test, classification was done and day scholars and hostellers of science and arts faculties were classified as introverts, ambiverts and extroverts. Chi-square was used to find out the significant difference in the personality of the group.

ANALYSIS AND DISCUSSION OF RESULTS:

The analysis has been presented in the following tables -

TABLE No. 1

Comparative results of Personality of Day scholar and Hostellers of science and arts faculty.

Faculty	Nature of Residence	Personality Type			(X^2) Chi-Square	P-Value
		Extrovert	Ambivert	Introvert		
Science	Day Scholar	1	4	21	0.94	>0.05
	Hostellers	2	6	18		
Arts	Day Scholar	2	4	20	1.52	>0.05
	Hostellers	5	3	18		

df-2

Table value for significance at 0.05 level -5.991

From the results it is clear that there is no statistically significant difference in the personality of day scholars and hostellers of science and arts faculties. The obtained values of Chi-square are 0.94 and 1.52 respectively which are less than the minimum table value for significance at 0.05 level.

TABLE No. 2

Comparative results of Personality of Arts /Science Faculty of Day scholar and Hostellers

Nature of Residence	Faculty	Personality Type			(X^2) Chi-Square	P-Value
		Extrovert	Ambivert	Introvert		
Day Scholars	Science	1	4	21	0.34	>0.05
	Arts	2	4	20		
Hostellers	Science	2	6	18	2.28	>0.05
	Arts	5	3	18		

df-2

Table Value for significance at 0.05 level-5.991

From the result it is clear that there is no statistically significant difference in the personality of students of science and arts faculties residing as day schools of science and arts faculties residing as day scholars and hostellers. The obtained value of Chi-square are 0.34 and 2.28 respectively which are less than the minimum value for significance at 0.05 level.

Thus, from the above results it is clear that there is no impact of nature of residence on personality of science and arts students. So Also, there is no difference of subject being studied of day scholars and hostellers. This is obvious since the student are at that stage of education which is a deciding factor on the future occupational career of the students. As such their main concern is their studies. It is significant that the type of environment of home and hostel are different. In the home environment, there are mostly blood relatives who are bounded together in emotional bond and they care for each other. In the case of hostellers, the environment is different since the most of the student are practically of the same age and they are bound by the studies. It is immaterial whether they are pursuing arts or science courses. The development of personality takes place on the early years of an individual and at the college stage the changes mostly in mode of behavior. Miller, 2007 in his research said personality type referred to a system for understanding human behavior. It is based upon the belief that there are 16 distinctly different personality types, and every person has one type that most accurately describes him or her.

On the basis of above result the hypothesis are not rejected.

CONCLUSION:

The following conclusion may be drawn:

1. There is no impact of nature of residence on the personality of science and arts students.
2. There is no impact of subject being studied on personality of day scholars and hostellers.

BIBLIOGRAPHY

- Bhatnagar R.P.: "Research on Personality Correlates and Academic Achievement - A Critique", Indian Educational Review, Vol.1, No. 1, New Delhi, 1967.
- Burgess E., "Personality in Over and Under Achievers in Engineering", Pennsylvania State University, Abstract of Dissertation, Vol. 16, 1953, pp 536-543.
- Entwistle N.J., "Academic Motivation and School Attainment", British Journal of Education and Psychology, Vol. 38, No. 2, June 1968, London, pp 88-92
- Eysenck H.: "Personality Patterns in Various Groups of Businessmen", Occupational Psychology, Vol. 41, London, 1967, pp 249-250.
- Gupta L.P., "A Comparative study of Personality Needs and Academic Achievement of Scheduled and Non-Scheduled Caste Graduates and Post Graduates Students", Quest in Education Vol. XVII, No. 1, New Delhi, 1980
- Mangal S.K., Advance educational Psychology, New Delhi: PHI learning pvt ltd, 2012
- Warburton F.W., "The Measurement of Personality", Educational Research, Vol. 4, Issue 1, Washington, 1961, pp 2 - 17. .

A Study of Multicultural Attitude in Teacher Trainees

Mrs. Rashi Dubey Mishra*

ABSTRACT

Multiculturalism is a body of thought in political philosophy about the proper way to respond to cultural and religious diversity.

Indian society is a home of various cultures with variety of values, religion, languages and ethnic differences. The culture of India has been shaped by its long history, unique geography and diverse demography. India's languages, religions, dance, music, architecture and customs differ from place to place within the country, but possess a commonality. Education plays vital role in moulding a child to have tolerance regarding other cultures therefore great responsibility lies on our future teachers. There is lack of knowledge among the teacher trainees regarding different cultures, which leads to misunderstandings concerning students' manners. The role of the teacher is vital because the teacher is the person who builds the atmosphere during the class and through equal treatment he/she can create favourable environment for the students coming from different backgrounds. This paper thus focuses on assessing the multicultural attitude of the teacher trainees. The problem areas are understood and in future training can be given to them accordingly so that they can target towards holistic development of students and tackle issues of a multicultural classroom. The present survey was done on B.A, B.Ed students in Pune through closed ended questionnaire. It revealed that not many teacher trainees are aware of multiculturalism. There is a dire need of organizing various cultural activities highlighting the diversities in our culture which can bring about a change in the attitude of the trainees towards multiculturalism. They need to remove their prejudices and biases towards other cultures. The self confidence and adjustment of the trainees needs to be enhanced which is possible through proper training. The trainees find it difficult to voice for others problems which can be improved over a period of time.

Keywords-multiculturalism, attitude, teacher trainees

Introduction

Multiculturalism is coping up and living with other cultures. This means acknowledging, accepting and encouraging different cultural customs. The idea of multiculturalism can vary from giving equal rights to all cultures to accommodating cultural minorities.

Indian society is a home of various cultures with variety of values, religion, languages and ethnic differences. The culture of India has been shaped by its long history, unique geography and diverse demography. India's languages, religions, dance, music, architecture and customs differ from place to place within the country, but possess a commonality. Education plays vital role in molding a child to have tolerance regarding

*Assistant Professor, H.G.M Azam College of Education, Pune

other cultures therefore great responsibility lies on our future teachers. Today the youth of our nation should consider themselves global citizens first in this era of technological advancements. Multicultural Education can serve as a tool to overcome various issues related to cultural diversities like caste, gender, language, lifestyles, professions prevailing in our society. The National Council for Accreditation of Teacher Education (NCATE) also focussed on multicultural education as one of the standards for accreditation of teacher education.

Definition of Multicultural Education: (Paul, G., 2000)

Multicultural education is a progressive approach for transforming education that holistically critiques and addresses current shortcomings, failings, and discriminatory practices in education. It is grounded in ideals of social justice, education equity, and a dedication to facilitating educational experiences in which all students reach their full potential as learners and as socially aware and active beings, locally, nationally, and globally.

Multicultural education acknowledges that schools and colleges are essential to laying the foundation for the transformation of society and the elimination of oppression and injustice educational practices and how they affect the learning of all students: testing methods, teaching approaches, evaluation and assessment, school psychology and counselling, educational materials and textbooks, etc.

To fulfill all the aims teachers play an important role in the society to prepare students as global citizens without losing their ethnic identity. Multicultural education in Indian context should focus on girl education, education of minority, education of backward classes and rural areas. Thus it should become an integral part of teacher education so as to train future teachers to teach in a culturally diverse school environment.

Dimensions of Multicultural Education-(Banks, J.)

- 1) Content integration- more teachers of all kinds can get involved, whether they teach maths or science.
- 2) Knowledge construction-This process moves to a different level because here teachers help students to understand, investigate, and determine the implicit cultural assumptions
- 3) Equity pedagogy-teachers modifying their teaching styles so that they use a wide range of strategies and teaching techniques such as cooperative groups, simulations, role-playing, and discovery
- 4) Prejudice reduction-All teachers whether you teach math or physics or social studies should work to reduce prejudice in the classroom and all educators should use methods to help students develop more positive racial attitude.
- 5) Empowering school culture and social structure to see how to make it more equitable.

Review of related literature-

- 1) The book authored by Mitchell, B. and Saisbury, R. titled "Multicultural Education-An International Guide to Research, Policies and Programs" focuses on the history of the various cultures which prevailed in Indian society. The various languages dominating in the society. This book also discussed

overpopulation as problem of our multicultural society which hampers education for all even after so many policies have been established.

- 2) The book authored by Sue, D. (2012) titled "Counselling the culturally diverse: Theory and practise" is a phenomenal piece of work as it focuses on understanding teachers' attitude towards multicultural education and help school leaders understand what is required in order for schools to attempt to narrow the achievement gap and reduce the differences in performance all ethnic and cultural groups of students.
- 3) The article by Tak, M. & Kerry, J. titled "Creation of culturally responsive classrooms: teachers' conceptualization of a new rationale for cultural responsiveness and management of diversity in Hong Kong secondary school" highlights the teachers' views of the cross-cultural experience of ethnic minority students, their influence on the performance of these students, and how the diverse learning needs of these students are being addressed.
- 4) The article by Wilson, K. Professor, College of Education and Human Services Southern Illinois University Carbondale. Multicultural Education (1997) gave the concept of Multicultural education from different perspective and the positive and negative aspects were understood. It also explained the practical application of multicultural education. It relates to education and instruction designed for the cultures of several different races in an educational system. This approach to teaching and learning is based upon consensus building, respect, and fostering cultural pluralism within racial societies. Multicultural education acknowledges and incorporates positive racial idiosyncrasies into classroom atmospheres.

Need of the Study

- 1) It is a need to create awareness about Multicultural Education. Teachers should focus on content integration that is inclusion of materials and values from various cultures in their teaching. For this purpose the attitude of the teacher trainees on Multicultural education need to be found.
- 2) It is further important to train the teacher trainees and enhance their knowledge through reconstruction on this issue and thus equip them to deal with a multicultural classroom. This area is not given much importance still in teacher education in our nation.
- 3) Teachers are required to understand Equity pedagogy which is to alter their teaching method to accommodate the various cultural differences of diverse classroom to enhance academic achievements, cross ethnic relations, communication skills and self-esteem of students.

Statement of the problem-

To assess the Multicultural attitude in the B.A. B.Ed. students in Pune city.

Definition of Key Terms:

Assess

Conceptual Definition-

To judge or decide the amount, value, quality, or importance of something.
(<http://dictionary.cambridge.org/dictionary/english/assess>)

Operational Definition-

To analyze the attitude of teacher trainees towards Multiculturalism.

Multicultural**• Conceptual Definitions-**

An approach used by teachers to effectively promote diversity in the classroom. This approach embraces differences in ethnicity, culture, race, gender, religion etc. - (Derrick Meador)

• Operational Definitions-

It is the attitude towards various languages, arts, gender, economic status and ethnic groups prevailing in our society in the teacher trainees.

B.A, B. Ed -**Operational Definition-**

Integrated degree of Bachelor of Arts and Bachelor of Education for duration of four years started by colleges under SPPU.

Objectives -

- To assess the attitude of the B.A. B.Ed. teacher trainees towards Multiculturalism.

Scope-

- 1) The study focussed on Teacher Trainees of Pune city only.
- 2) The study was related to teacher education colleges in Pune.
- 3) The study was related to Multiculturalism.

Delimitation-

- 1) The study was delimited to the teacher trainees of Integrated B.A, B, Ed course in Pune
- 2) The study was delimited to the Non-Aided Teacher Education College - Azam College in Pune.
- 3) The study was delimited to Final year B.A, B. Ed students of 2016-17 batch.
- 4) The study was delimited only to the Language and Religious diversity aspects of Multicultural Education.

Limitations:

- 1) There was no control on the variables such as economic status, attention span and level of motivation of the teacher trainees.
- 2) The responses obtained were solely dependent on the responses given by the participants.

Research Questions

What is the attitude of the teacher trainees towards Multiculturalism?

Population-

All the B.A. B.Ed. students studying in the Non aided Education colleges affiliated to SPPU .

Sample:

- 1) College Selection Purposive sampling - Azam College selected by the researcher.
- 2) Teacher Trainees Selection - i) Non Probability based - Purposive sampling was done for the survey to

assess the attitude of teacher trainees. Sample include 50 teacher trainees of First Year and Final Year students.

Assumptions:

- 1) The teacher trainees are aware of the concept of Multicultural Education. (Gorski, P. 2010)
- 2) Teacher trainees possess a positive outlook towards Multicultural Education (Banks. 1999)

Tools of Data Collection:

A Non-Projective technique-Attitude Test-Questionnaire close ended questions was developed by the researcher to assess the attitude of the teacher trainees towards multiculturalism

Analysis of Data -

Percentage was used for data analysis. The responses of the teacher trainees were assessed according to the answers they gave of the Yes/No type of questions in the questionnaire. The question wise responses were analyzed to understand the overall attitude of the teacher trainees. The problem areas were understood and necessary solutions can be given for the same.

Findings

- 1) 60% of teacher trainees are aware of the concept of Multiculturalism.
- 2) 10% of the trainees had formal training of multiculturalism.
- 3) 70% of the trainees go out of their way to hear/read/understand viewpoints other than their own.
- 4) 75% of them try to understand the views of the people from different communities.
- 5) 40% of them are uncomfortable in discussing the issues related to discrimination, racism and oppression.
- 6) 20% trainees push themselves to explore their prejudices and biases related to multiculturalism.
- 7) 98% trainees enjoy media and art from different cultures.
- 8) 45% trainees take pleasure in public speaking and feel at home everywhere.
- 9) 30% trainees have self-confident reaction to stressful situations.
- 10) 40% trainees adjust to different cultural settings and situations.
- 11) 40% seek contact with people from different backgrounds.
- 12) 10% of the trainees are able to voice other people's thoughts with confidence.
- 13) 40% trainees find it hard to understand others behavior and empathize with them.
- 14) 90% trainees are open to new ideas.

Interpretation

The survey revealed that not many teacher trainees are aware of multiculturalism. There is a dire need of organizing various cultural activities highlighting the diversities in our culture which can bring about a change in the attitude of the trainees towards multiculturalism. They need to remove their prejudices and biases towards other cultures. Their self confidence and adjustment of the trainees needs to be enhanced which is possible

through proper training. The trainees find it difficult to voice for others problems which can be improved over a period of time.

Conclusion

Teacher trainees are the future teachers and thus it is very essential for them to have a positive attitude towards other culture especially in our Indian society. In future as teachers they can transmit it to their students.

Contribution of Study in field of Education-

- 1) The study helps in understanding the importance of multicultural education programs in Teacher Education, It thus motivates curriculum planners to focus on this aspect while making amendments in the curriculum so that minimum learning needs of a child is catered to.
- 2) This research makes teacher educators also focused towards preparing future teachers for a multicultural classroom in our nation and build cross ethnic friendships.
- 3) The teacher trainees can understand the significance of multicultural education and can cater to needs of diverse cultural groups which they will handle in future by flexible teaching learning.
- 4) The whole Indian society can develop a positive attitude towards other cultures and rise above ethnocentrism and cultural Intolerance and contribute towards national growth with unity.

Bibliography

- Bennett, C. (1995). Comprehensive multicultural education: Theory and practice (3rd ed.). Massachusetts: Allen & Bacon.
- Bradford, S. (2009). Approaches to Multicultural Education in Pre-service Teacher Education : Philosophical Frameworks and Models for Teaching. Eric (Volume. 16 ,pp. 45-50)
- David, W. (2010). Counseling the culturally diverse: Theory and Practice. Michigan: J Wiley & Sons.
- Karen, L. (2010). Multicultural Attitude and Issues.
- Kaul, L. (2011). Methodology of Educational Research. New Delhi: Vikas.
- Mitchell, B. & Saisbury, R. Multicultural Education- An international guide to research, policies and programs.
- Prasad, B. (2012). Developing a Culturally Responsive Pedagogy.
- Swisher, K. (2010). Comparison of Attitude of Reservation Parents and Teachers towards Multicultural Education. (Volume 26, pp. 732-741)

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में बुंदेली संस्कृति

अंजली जैन*

शोध सार

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास बुंदेलखण्ड की संस्कृति का प्रतिबिम्ब हैं। बुंदेलखण्ड में लंबे समय तक रहने के कारण बुंदेली संस्कृति उनके मन एवं आत्मा में बसी हुई है। उन्होंने अपने उपन्यास—'बेतवा बहती रही', 'चाक', 'अगनपाखी', 'झूलानट', 'त्रिया हठ', 'इदन्नमम', 'कही ईसुरी फाग', 'फरिश्ते निकले' आदि में बुंदेलखण्ड के रीति—रिवाज, खान—पान, रहन—सहन, तीज—त्यौहार, व्रत—उपवास, धार्मिक मान्यताओं एवं जीवन मूल्यों का सूक्ष्म एवं यथार्थ चित्रण किया है।

मुख्य शब्द (की—वर्ड) — बुंदेली परिवेश, रीति—रिवाज, तीज—त्यौहार, धर्म, लोक संस्कृति, जीवन मूल्य।

संस्कृति मानव जीवन का सर्वाधिक प्रमुख तत्व है। संस्कृति ही मानव को अन्य जीवों से दिलग कर उसे श्रेष्ठता प्रदान करती है। संस्कृति में हमारे रीति—रिवाज, रहन—सहन, पर्व उत्सव, कला—कौशल, ज्ञान—विज्ञान, एवं जीवन मूल्यों की पीढ़ी—दर—पीढ़ी हस्तांतरित विरासत निहित होती है। संस्कृति का विशुद्ध रूप हमें ग्रामीण परिवेश में दृष्टिगोचर होता है क्योंकि ग्रामों में पारंपरिक मूल्यों के प्रति मोह एवं आस्था शहरी परिवेश की अपेक्षा अधिक होती है। "भारतीय संस्कृति का मूल आधार कृषि संस्कृति है। अतः ग्राम संस्कृति को भारतीय संस्कृति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।" स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति के मूल रूप को जानने के लिए हमें भारतीय ग्रामों की तरफ देखना होगा।

बुंदेलखण्ड का क्षेत्र आर्थिक संदर्भ में भले ही पिछड़ा हुआ हो परन्तु सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत समृद्ध एवं विविधता प्रधान है, जिसका सर्वाधिक शुद्ध एवं यथार्थ रूप हमें मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में मिलता है। मैत्रेयी पुष्पा का प्रारंभिक जीवन बुंदेलखण्ड के ग्रामों में ही व्यतीत हुआ है, उन्हें बुंदेली सांस्कृतिक मूल्यों की गहरी समझ है, उन्होंने ग्रामीण परिवेश एवं संस्कृति को अत्यधिक निकटता से देखा है इसी कारण उनके उपन्यास बुंदेली संस्कृति का पर्याय हैं। मैत्रेयी पुष्पा के प्रायः समस्त उपन्यासों— 'बेतवा बहती रही', 'चाक', 'इदन्नमम', 'अल्मा कबूतरी', 'अगनपाखी', 'त्रिया हठ', 'कही ईसुरी फाग', 'फरिश्ते निकले' में बुंदेली रहन—सहन, रीति—रिवाज एवं सामाजिक—धार्मिक मूल्यों के अनेक सजीव चित्र उपस्थित हैं।

मैत्रेयी पुष्पा ने बुंदेलखण्ड के रहन—सहन, वेश—भूषा, खान—पान आदि को बड़ी सूक्ष्मता से चित्रित किया है। विशेषतः शादी ब्याह के अवसरों पर दुल्हन का पहनावा अत्यंत पारंपरिक होता है। 'बेतवा बहती रही' में उर्वशी के रूप में बुंदेली दुल्हन की वेश—भूषा को शब्दों के दर्पण में दिखाती हुई वे लिखती हैं — "टीका—वेंदी के झलर—झलर सफेद मोती लटककर माथे पर बिखर रहे थे। गुलाबी अंधेरों पर विछलती तीन फूल की नथ घुँघरूदार जंजीर के हुक से बालों में फंसी थी। सुहाग के कचारा (काली चूड़ी) और बीच में चौड़ी बेल चूड़ी, आगे शेर के मुँह वाले चूरा (कंगन, मीनाकारी के पुरानी चाल के ठप्पेदार हस्तबन्द हार हसली के साथ बुन्देलखण्ड और मराठी मिली जुली गढ़त का तिदाना।"¹ इसी प्रकार 'त्रिया हठ' में वे उर्वशी के लिए लिखती हैं — "दुल्हन घाघरा ओढ़नी में ढकी मुँदी गुड़िया सी न हो तो उसे दुल्हन कौन कहे? मुँह माथे पर टीका, झूमर और हाथ पाँवों में दस्तबंद और पायलें।"² बुंदेलखण्ड में पर्दा प्रथा का भी अत्यधिक महत्व है। जेट, ससुर एवं अनजान व्यक्ति से पर्दा करने वाली बहुएँ संस्कारी मानी जाती हैं। 'चाक' एवं 'बेतवा बहती रही' में सती प्रथा का भी उल्लेख है।

बुंदेलखण्ड में जन्म, विवाह एवं मृत्यु संस्कार से संबंधित कुछ विशेष रिवाज प्रचलित हैं। बालक के जन्म के दो दिन बाद

*शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

चरुआ चढ़ाने की प्रथा का उल्लेख 'चाक' में मिलता है – "चरुए का मतलब है जन्म के दो दिन बाद का उत्सव। जच्चा चलकर आँगन तक आती है। चौक पर थोड़ी देर खड़ी रहती है ... चौक पूरा, कोरी कलिसया गोबर की अल्पना से चीती। कोठे के द्वार के दोनों ओर लौंग सिरी बीबी ने सीकें लगाकर गोबर के सातिए धरे।" "बेतवा बहती रही" में कन्यादान, साली द्वारा दूल्हे के जूते चुराने की प्रथा एवं विवाह के दौरान सम्पन्न किये जाने वाले विभिन्न रिवाजों एवं देव-पूजा का चित्रण किया गया है। बुंदेलखण्ड में बछिया दान करके सादे रीति रिवाज से किसी परित्यगता का दूसरा विवाह करने की प्रथा प्रचलित है, जिसका उल्लेख मैत्रेयी पुष्पा ने 'झूलानट' एवं 'फरिश्ते निकले' में किया है। 'झूलानट' में बाल किशन की माँ अपने बड़े बेटे की पत्नी का ब्याह अपने छोटे बेटे बाल किशन से करने की घोषणा करती हैं— "बछिया होगी ... नहीं तो गाँव के लोग बिरादरी वाले पूछेंगे नहीं कि सुमेर की दुल्हन बाल किशन की घरवाली कैसे हुई। धरती में गगरी गाड़कर उसे फोड़ देने का रिवाज भी हमारे यहाँ नहीं हो सकता। यह असगुन तो तब होता है, जब राँड विधवा से गठबंधन हो बछिया पुन्न होगी। पंडित मंतर पढ़ देगा।" इस प्रकार बुंदेलखण्ड में कम उम्र में विधवा होने वाली स्त्रियों एवं परित्यगताओं के पुनर्विवाह की सामाजिक प्रथा संस्कार के रूप में प्रचलित हैं। बछिया प्रथा का उल्लेख 'फरिश्ते निकले' उपन्यास में बेला बहू एवं उजाला के वार्तालाप द्वारा भी मिलता है – "वीर कहता है, उसकी परदादी थीं वही नई दुल्हन। तब तक उमर सिंह के छोटे भाई मेहर सिंह कुँवारे थे। बस उनसे ही दुल्हन की बछिया कर दी गई।" इससे स्पष्ट होता है कि एक ओर जहाँ बुंदेली ग्रामों में कुछ सामाजिक सांस्कृतिक कुरीतियाँ प्रचलित हैं वहीं जीवन को नयी दिशा प्रदान करने वाले संस्कार भी विद्यमान हैं। विवाह की भांति मृत्यु संस्कार से संबंधित बुंदेली प्रथाओं का चित्रण भी मैत्रेयी पुष्पा ने किया है 'चाक' में पितृ अमावस्या, श्राद्ध एवं कागौर का उल्लेख मिलता है।

बुंदेलखण्ड में लड़के की बारात जाने के बाद घर की समस्त स्त्रियाँ विभिन्न प्रकार से अपना मनोरंजन करती हैं एवं स्वांग रचाती हैं इस प्रथा में 'बेतवा बहती रही' में दर्शाया गया है— "सभी पुरुषों के बारात में चले जाने के बाद दच्चिन काकी ने आवाज़ दी— मीरा बिन्नु सोउतीं हौ कि जुगिया करवै कौ इन्तजाम करौ, मूसर कितै धरौ हमें दे जाओ चलौ—तुम उदर उरवसी दूला—दुलइया बन जाओ।"

बुंदेली संस्कृति में व्रत, पर्व, उत्सव, त्यौहारों, मेलों का विशेष महत्व है अभावों से ग्रस्त गेहनत ग्रामीणों के पास आनंद के क्षण सीमित होते हैं। साथ ही ये अत्यधिक धार्मिक भी होते हैं, इसी कारण यहाँ दीवाली, दशहरा, नवदुर्गा, होली, संक्रांति, बसंत आदि उत्सव अत्यधिक उत्साह से मनाये जाते हैं। 'चाक' में सारंग और रंजीत के घर में दीवाली के दृश्य देखिए – "दीवाली के दिन घर आंगन लीपा। चौका चूल्हा सहेजा। पूरी-पकवान का दिन है दीवाली। सारंग सबेरे से लगी हैं। रंजीत खील बताशे धर रहे हैं थालियों में ... एक दीपक सास के थान पर; दूसरा गाँव के सिवाने पर। तीसरा पथवारी पर। चौथा खेत में, पाँचवा मंदिर पर। छठा घेर में।" दशहरे पर कई गांवों में सुआटा का पूजन होता है। घर की बाहरी दीवाल पर मिट्टी से सुआटा का स्त्री रूप बनाया जाता है— "भुवन दरवाजे के बाहर घर की दीवार पर सुआटा का स्त्री रूप स्थापित कर रही थी। आसपास चंदा सूरज बनाए, पावों के नीचे धरती रची आँखों की जगह कौड़ियाँ चिपकाई हाँथों में टूटी चूड़ियों के टुकड़े सजाए ... फूल मिठाई चावल हल्दी चढ़ाकर पूजा हुई।"

बुंदेलखण्ड में होली का त्यौहार होलिका दहन से प्रारंभ होकर पाँच दिनों तक चलता है। पाँचों दिनों फागों गायी जाती हैं। 'चाक' उपन्यास में होली के चित्र उपस्थित हैं – "बोल होरिका मइया की जै! जैकारे बुलने लगे। बोल नरसिंह भगवान की जै! होली में आग लगा दी। लपटे उठने लगीं।" बुंदेलखण्ड में संक्रांति भी काफी उत्साह से मनायी जाती है इस दिन तिल का उबटन लगाकर नदी में स्नान करने का विशेष महत्व है – "संक्रांति का दिन—सूरज का घाम कि चाँदनी? माघ माह की किटकिटाती ठंड में अतरपुर की जन-परजा करबन नदी के पाट पर जमा हैं। पछइयाँ शीत हवाओं के महूरत में पुण्य नहान। जो न नहाए गर्दभ योनि में जाए।" 'चाक' में होली के दूसरे दिन वसौरा (वासी खाने से देवी की पूजा) का भी उल्लेख है। बुंदेली ग्रामों में नवरात्रि के समय भक्त साँग छिदवाते हैं जिसमें एक त्रिशूल को दोनों गालों के आरपार छेदकर देवी का पूजन किया जाता है। 'झूलानट' का बालकिशन भी साँग छिदवाता है – "मैं साँग छिदवाऊँगा ... महामाई अपने भगत का सत्त भी चीन्हती—जानती हैं, नहीं तो लोहे का

चमकता अनीदार फल गाल के भीतर की नरम खाल माँस को पार करता हुआ बाहर निकल जाए और एक बूँद खून न गिरे! तेरी महिमा माता! चमत्कार।”¹²

लोकगीत, लोकनृत्य एवं लोक कथाओं में बुंदेली संस्कृति की खास पहचान हैं। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में बुंदेली लोकगीतों का अनुपम भंडार हैं। बुंदेलखण्ड में जन्म, विवाह, खेल भक्ति आदि अवसरों से संबंधित अनेकानेक लोकगीत गाये जाते हैं जिनकी झलक हम मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में साफ देख सकते हैं। हरदौल की लोककथा बुंदेलखण्ड की पहचान हैं हरदौल प्रेम त्याग एवं समर्पण के प्रतीक हैं, बुंदेलखण्ड के प्रत्येक गाँव में हरदौल लाला के चबूतरे होते हैं। ब्याह के पहले और बाद में हरदौल की पूजा अवश्य की जाती हैं। कही ईसुरी फाग में लेखिका हरदौल की कथा कहती है – “भाभी का प्रेम अमर करके हरदौल चले गये ... औरतें हरदौल को याद करने लगी। उनका प्रेम स्त्रियों के मान का विषय बना यह रिवाज स्त्रियों द्वारा ही चलाया हुआ है कि शादी ब्याह के पहले निमंत्रण पर हरदौल का नाम रहे। वे कुँआरे अपनी जीवन लीला खत्म कर गये, अब हर विवाह के पहले मेहमान होते हैं।”¹³ ‘कही ईसुरी फाग’ में बुंदेलखण्ड के बेड़नी नृत्य को भी कथावस्तु का अंग बनाया गया है। इस नृत्य को ‘राई’ के नाम से जाना जाता है जिसे बेड़नी जाति की स्त्रियाँ पीढ़ी-दर पीढ़ी अपनाती है। बुंदेली ग्रामों में ब्याह, जन्म आदि अवसरों पर बेड़नी (राई) नृत्य अवश्यक होता है। यद्यपि कुछ सभ्य लोगों द्वारा इसे अश्लील एवं फूहड़ माना जाता है।

इस प्रकार मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में बुंदेली संस्कृति के समस्त रंगों के सजीव चित्र उपस्थित हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में बुंदेलखण्ड के रीति रिवाजों, परंपराओं, व्रत, त्यौहारों, उत्सवों, खान-पान, रहन-सहन, पहनावा, पूजापाठ, धर्म, आदि उल्लेख करके लुप्त होती अनेक परंपराओं पर ध्यान आकर्षित किया है। उनके लेखन में बुंदेली माटी एवं संस्कृति की सुगन्ध मौजूद है, निश्चित ही उनके उपन्यास बुंदेलखण्ड की संस्कृति के प्रतिनिधि हैं।

संदर्भ –

1. डॉ. लक्ष्मीनारायण पाण्डेय – स्वातंत्रयोत्तर, हिन्दी उपन्यासों में ग्रामों का स्वरूप, सागर प्रकाशन, जवाहरगंज, सागर 1998, पृ. 85
2. मैत्रेयी पुष्पा – बेतवा बहती रही, किताब घर प्रकाशन, नयी दिल्ली 2010, पृ. 41
3. मैत्रेयी पुष्पा – त्रिया हठ, किताब घर प्रकाशन, नयी दिल्ली 2014, पृ. 18
4. मैत्रेयी पुष्पा – चाक, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. नई दिल्ली 2010, पृ. 372-73
5. मैत्रेयी पुष्पा – झूलानट, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. नई दिल्ली 2013, पृ. 74
6. मैत्रेयी पुष्पा – फरिश्ते निकले, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. नई दिल्ली 2016, पृ. 202
7. मैत्रेयी पुष्पा – बेतवा बहती रही, किताब घर प्रकाशन प्रा.लि. नई दिल्ली 2010, पृ. 91
8. मैत्रेयी पुष्पा – चाक, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. नई दिल्ली 2010, पृ. 197
9. मैत्रेयी पुष्पा – अगनपाखी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2012, पृ. 24
10. मैत्रेयी पुष्पा – चाक, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. नई दिल्ली, 2010 पृ. 330
11. मैत्रेयी पुष्पा – चाक, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. नई दिल्ली, 2010 पृ. 244
12. मैत्रेयी पुष्पा – झूलानट, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., नई दिल्ली पृ. 12
13. मैत्रेयी पुष्पा – कही ईसुरी फाग, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. नई दिल्ली 2011, पृ. 127

श्रीलाल शुक्ल के उपन्यासों में पात्र एवं कथानक में प्रतीकात्मकता

डॉ. अरुणा विश्वकर्मा*

शोध सार

प्रस्तुत शोध पत्र वरिष्ठ साहित्यकार एवं कथाकार श्रीलाल शुक्ल के उपन्यासों में पात्र एवं कथानक को केन्द्र में रखकर लिखा गया है। इनकी पात्र रचना अद्भुत है, क्योंकि उनके पात्र हमारे ही बीच के या हम में से ही कोई होता है। वे समाज में किस तरह के लोग व कितने प्रकार के लोग रहते हैं उन सभी का वर्णन उनके उपन्यासों में मिलता है। उनके पात्र यथार्थ होते हैं और उनके द्वारा कहे गये कथन भी सत्य प्रतीत होते हैं। शुक्ल जी के प्रत्येक उपन्यास के कथानक नवीनता और यथार्थ लिये रहता है।

स्वतंत्रोत्तर हिन्दी उपन्यास में श्रीलाल शुक्ल संभवतः उन चंद इनेगिने उपन्यासकारों में से एक हैं। जिन्होंने 'साहित्यिक' और 'लोकप्रिय' के अंतर को मिटाते हुये औपन्यासिक आस्वाद की मौलिक शैली विकसित की है। लेखक अपने उपन्यास लेखन का आरंभ व्यक्ति पात्र की अंतरात्मा में उथल-पुथल मचाती स्वेच्छाचारिता और अराजकता के चित्रण से नहीं करते। 'सूनी घाटी का सूरज' न तो अवचेतन के अन्वेषण की ओर उन्मुख है और न रोमांटिक भटकन की ओर 'रागदरबारी' के पात्रों का संसार भी स्वाधीन भारत की विकास नीति और शासन तंत्र की विकृतियों के बीच लूट, मक्कारी और बेईमानी को सामूहिक स्वर पर बेपर्दा करता है।

'विश्रामपुर का संत' में भूस्वामी वर्ग के एक पतित व्यक्ति के एकांत, उसकी लंपटता और कामुकता का वर्णन किया गया है। कथा विन्यास की सेटिंग में कांग्रेसी सरकार की अफसरशाही, व्यभिचारी राजनीति और भू-स्वामी वर्ग के नये उत्पीड़क रूपों को बड़े कलात्मक ढंग से गुंफित किया गया है। हर पात्र के व्यक्तित्व को उसकी भंगिमाओं के साथ पकड़ने और अंकित करने की दृष्टि से श्रीलाल शुक्ल ने बहुत ही सूक्ष्मग्राही प्रेक्षण कौशल का प्रमाण उपस्थित किया है। वर्णन की इस कला को उन्नत स्तर पर पहुंचाने के लिहाज से वे अपनी विशिष्टता की छाप निःसंदिग्ध रूप में छोड़ते हैं।

'रागदरबारी' का कथानक शिवपालगंज नामक एक ऐसे गांव में घटी घटनाओं पर केन्द्रित है जिसके निवासी तमाम देहात में 'गंजहों' के नाम से जाने जाते हैं। यह गांव स्वाधीन भारत के सर्वाधिक पिछड़े, बुराइयों के कुश्ट से पीड़ित, सामंती शक्तियों के प्रभाव से शासित शोषित, सरकारी योजनाओं की असफलताओं का मैदान, द्वेष, शत्रुता, अपराध, अनैतिकता का शिकार और भ्रष्ट गँवई राजनीति की क्रीड़ास्थली है। शिवपालगंज में मशीनी तेजी से घटती चली जाने वाली असंख्य घटनाओं में से कुछ को चुना है और उनके यथार्थ को अपनी कल्पना शक्ति से परिशोधित करके उनका पुनः सृजन किया है। इराके बाद ये घटनायें इस प्रकार जोड़ दी गई हैं कि वे भारत भर में फैले अनेक शिवपालगंज की जीवन श्रृंखला को जीवंत रूप में प्रस्तुत करने की शक्ति से संपन्न हो गई हैं। डॉ. चंद्रकांत वादिवडेकर लिखते हैं -

"रागदरबारी का लेखक अपनी वस्तु से अत्यधिक तटस्थ है अपने अंचल के प्रति कोई मोह, कोई आवेग, कोई सम्पीना तंतु उसके मन में शेष नहीं रह गया एक वैज्ञानिक की निःसंगता से उसने अपने उपन्यास विषय का निरीक्षण किया है।"

शुक्ल जी की पहली औपन्यासिक कृति 'सूनी घाटी का सूरज' का पात्र रामदास सामंती वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है, साथ ही वह एक पूरी पीढ़ी का प्रतिनिधि बन जाता है। जो शिक्षा के लिये ना जाने किस-किस तरह के संघर्ष करता है। स्वाधीन भारत की स्वदेशी कांग्रेसी सरकार भू-स्वामित्व के उन्मूलन, सामंती व्यवस्था की समाप्ति, भूमि सुधार और देहाती जीवन में जनवादी रूपान्तरण के सवाल को लगातार टालती चली गई। कृषि क्रांति के कार्यभार को पूरा न करने के परिणाम स्वरूप गरीब बच्चों के भविष्य के साथ

*सहायक प्राध्यापक, जबलपुर पब्लिक कॉलेज, करमेता, जबलपुर (म.प्र.)

खिलवार एक दरिद्र किसान परिवार के एक अनाथ संतान की देखभाल शिक्षा-दीक्षा और भावी जिंदगी का प्रश्न उठाया गया है। रामदास ठाकुर से छूटकर मुंशी नवरत्न लाल की 'दया-कृपा' से उनके घर नौकर बन गया। पढ़ाई के साथ-साथ पूरी नौकरी वाले मुंशी जी उस बालक से कहते हैं – "अपने को जो मिला है, उसकी बेकद्री कभी नहीं करनी चाहिए। तुम पहले भैंस चराते थे बाद में ठाकुर के लड़कों की रखवाली में स्कूल जाने लगे। मुझे तुम्हारी जरूरत न थी। अमीन साहब ही के कहने से मैंने तुम्हें अपने घर रखा है। तुम्हारे खेत और पेड़ भर दे देने से तुम्हारा कर्ज नहीं पट पाया। मुझे अपनी जेब से पच्चीस रूपया लगाना पड़ा था।"²

'अज्ञातवास' में बसंत का लड़का ऐसा पात्र है जो दलित वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। जो अपना क्रोध मध्य वर्ग के प्रति दिखाता है, वे लोग जो स्वार्थपूर्ति के लिये दलित वर्ग को किसी भी हद तक कुचल सकते हैं, वह कहता है – "नहीं मेरा बाप तुम्हारे सामने जाएं, ऐसा नहीं होगा। हमारे दो बीघे के हरे-भरे खेत। सामने से नहर बहती रही, पर उनमें एक बूंद भी पानी नहीं पहुंचा लहलहाती हुई ईख लू में जलकर राख हो गई इसीलिए न ओवरराियर साहब, कि मेरा बाप तुम्हारी पूजा नहीं कर सकता था? नीचे के खेतों के लिये अलग से कुलावा लगा दिया गया? क्यों? इन सबको मालूम है कि ऐसा क्यों हुआ।"³ 'रागदरबारी' उपन्यास का पात्र रूपन बाबू नयी पीढ़ी के उस वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है जो अपने को जन्मजात नेता मानता है और इसलिए कॉलेज के परिसर को अपनी नेतागिरी आजमाने का अखाड़ा बना लेता है।

आधुनिक युग में मानवीय उत्थान का एक मात्र आधार शिक्षा है। शिक्षा वह महत्वपूर्ण साधन है जिसके द्वारा कोई नवोदित राष्ट्र अपनी आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक उन्नति कर सकता है। परंतु शिक्षा क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण शिक्षा का स्तर गिरता जा रहा है। वास्तव में आजकल के प्रायवेट कॉलेज दुकान जैसे ही हैं। प्रिंसिपल और अध्यापक, प्रबंध समिति के अध्यक्ष के हाथ की कठपुतली होते हैं। ऐसे ही पात्र 'रागदरबारी' के वैद्य जी हैं। जो शिवपालगंज में स्थित छंगामल विद्यालय को अपनी मुठ्ठी में दबाये हुये हैं। वे प्रबंध समिति के चुनावों के समय गलत तरीकों को अपनाकर अध्यक्ष बनते हैं। एवं अपने विरोधी मेम्बरों को कॉलेज में नहीं आने देते; इसके लिये भी गुंडा लगा देते हैं। बलराम सिंह ने कहा – "जरा बेटा कॉलेज की पैकरमा करके देख आओ, हमारे आदमी ठीक से नाकावंदी किये हैं कि नहीं और रमेसरा से कह देना कि साला किसी से भिड़ ना जाये। जो समझाने से माने उसे इधर फाटक पर भेज दो।"⁴ वैद्य जी नेता वर्ग के एक ऐसे पात्र हैं जो पूरे शिवपालगंज का नेतृत्व करते हैं तथा शिवपालगंज में रचित थल-समाज उनके कुनवे और संगी साथियों का है जो परजीवी बिचौलिया संस्कृति के प्रतिनिधि हैं, जो हर युग में रहे हैं। उपन्यासकार के शब्दों में – "वैद्य जी थे, हैं और रहेंगे। अंग्रेजों के जमाने में वे अंग्रेजों के लिये श्रद्धा दिखाते थे। देशी हुकूमत में वे देशी हाकिमों के लिये श्रद्धा दिखाने लगे। वे देश के पुराने सेवक थे।"⁵ वर्तमान राजनीति माफिया जिस उर्वर भूमि की उपज है, शिवपालगंज उसका एक लघु प्रतिरूप है। जो 'रागदरबारी' के कथानक में बहुत अच्छी तरह देखने को मिलता है। रूपन के अनुसार – "सारे मुल्क में यह शिवपालगंज ही फैला हुआ है। और असली शिवपालगंज वैद्य जी की बैठक में था।"⁶

'विश्रामपुर का संत' उपन्यास का पात्र जयंती प्रसाद बुद्धिजीवी वर्ग के सामंत वर्ग का प्रतिनिधि है जो स्वभाव से ही और संसाधनों से भी क्रूर शिकारी है और सब कुछ एक साथ पाना चाहता है कामाशक्ति के अनुरूप सौन्दर्य प्रेम, राजनीतिक लाभ, सुविधायें, कीर्ति, यश। कुंवर साहब की अतृप्तियां बेशुमार हैं उनकी ट्रेजडी यह है कि अस्सी साल की उम्र के सपने में भी जय, श्री सुन्दरी का शरीर आता है। 'अज्ञातवास' के रजनीकांत भी इसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। निम्न मध्य वर्गीय प्रवृत्तियों के चरम प्रतिनिधि हैं। बचपन की ब्याही बीबी को छोड़कर घूस के पैसे पर ऐयाशी करने वाले और यश लूटने वाले। 'मकान' उपन्यास का नारायण भी मध्यवर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। सितार वादक नारायण बनर्जी, नगर-निगम में नौकरी करता है। चापलूस, मक्कार, लम्पट आदि-आदि उसका व्यक्तित्व है। इसमें अहम, आत्म स्वाभिमान और कलाकार वाला मन भी है, जो कभी-कभी दिखता हैय

जो शराब के नशे में वह अक्सर बाहर आता है। एक दमित व्यक्तित्व । 'राग-विराग' उपन्यास का पात्र शंकरलाल पिछड़ी जाति का है। वह इसी वर्ग का प्रतीक है। वह अपनी पिछड़ी पृष्ठभूमि से निकलकर लखनऊ में मेडिकल की पढ़ाई करते हुये लंदन स्कूल का रिचर्स फैलो बनता है, परंतु इसके बावजूद उसकी निम्न जाति उसका पीछा नहीं छोड़ती। समाज में व्याप्त जातिवाद के कारण उसकी प्रेयसी सुकन्या भी उसे उसकी पृष्ठभूमि से अलग नहीं देख पाती। उसकी मौसी उसे समझाती है, "ऐसे समाज में जिसमें मध्यवर्ग निरंतर फैल रहा हो, इस तरह का दुराग्रह क्या आज तुम्हें बचकाना नहीं दीखता?....." उसमें किसी भी प्रकार का ऐब न होने, सिर्फ पिछड़ी पृष्ठभूमि का होने के कारण सुकन्या और उसके पिता उसकी अच्छाई को नरजअंदाज कर देते है।

संदर्भ ग्रंथ

1. डॉ० चंद्रकांत वांदिबडेकर : उपन्यास स्थिति और गति, पृष्ठ 285
2. श्रीलाल शुक्ल : सूनी घाटी का सूरज, पृष्ठ 45
3. श्रीलाल शुक्ल : अज्ञातवास, पृष्ठ 65
4. श्रीलाल शुक्ल : रागदरबारी, पृष्ठ 138
5. श्रीलाल शुक्ल : रागदरबारी, पृष्ठ 29
6. श्रीलाल शुक्ल : राग-विराग, पृष्ठ 107

Feministic View of "I Want"

Dr. Rashmi Singh*

ABSTRACT

Since years, women in India have lived under the patronage and protection of their father, husband or sons, driving them into a perpetual state of slavery and dependence. But, now, the modern women educated and awakened to herself and an individual identity, craves for an independent and self reliant status in her life and aspires to educate herself. Today's modern, educated young woman dares to question mans willful unconcern for her wishes. She is economically independent and looks after her domestic front equally well. The heroine of Deshpande has become conscious of the futility or emptiness of the various long preserved notions and taboos about women in general and they have started opposing them, feeling alienated and lonely in the process at times. Shashi Deshpande is perhaps the only Indian woman novelist who has made a bold attempt to give voice to the frustrations and disappointments of women in a patriarchal world. Shashi Deshpande's characters portray her philosophy of life as a novelist, that is, though each individual has to solve his/her problems on his/her own, it does not mean that he/she was to reject all relationship in life. Her stories are about the personal journey of woman; the protagonist learns as she undergoes the crisis. Her stories depict effectively a disturbed but a brave feminine psyche in the new ethos.

Key Words: Individual identity, frustration and disappointment, patriarchal world.

Shashi Deshpande in her short story carefully portrays shades of pain, love, anger and frustration as she portrays parent-child relationship in her story 'I want', Deshpande captures the consciousness of a young woman who was forced into matrimony against her will. Deshpande has reflected the growing resentment against this man-woman relationship in the heart of this woman protagonist in a way, where each expression is equivalent to a powerful poetic expression conveying irresistible force. "I want....I Want.... I want....what about me? My silence was such a loud cry of indignation; I was surprised he couldn't hear me. Nevertheless, I waited patiently, may be, he would still ask me. What would I tell him if he said, "What do you want?" My desires were so elemental compared to his that I was ashamed of them." [I Want: 40] that a fairly good deal of self-searching in I Want where a twenty-seven year old woman Alka is subjected to 'the insolent stares, the impertinent question' by the groom's party. Alka hates to be exhibited and inspected again and again. But she cannot protest lest she should bring a bad name to her father. The earlier refusals from the groom's party have brought an air of disappointments and hopelessness in the family atmosphere. The fear of remaining a spinster in Indian society is a constant humiliation. Alka too carries this burden of inferiority which bends her by ashamed when she faces remarks like, 'A daughter of 27 and not married.'

* Associate Professor, Jabalpur Public College, Jabalpur, (M.P.)

The research paper shows that in conservative family, a daughter is considered to be a burden till she gets married. Alka lives constantly under the shadow of guilt and shame for being the cause of her parents' anxiety. Alka feels guilty for being a burden on her parents as if being an unmarried is a criminal act.

Obviously, she is a woman of consciousness and conscience who wants to discover her integral identity. But as regards her marriage, she has little or no choice of her own; her parents are there to safeguard her interests. Without asking Alka they settled the things with a boy who is a man of 'I want', a selfish, self assertive type. He expects her to resign her job and confine herself to home. Total authoritarian male mentality is found when he puts before Alka his expectations. Alka was so astounded with his self-centeredness. Instead of asking Alka's desires, he discloses his list of wants. Being a thinking woman, she has her own desires to fulfill. Though she does not want a husband having a four-figure salary or a car, she still desires a man who '...hears my voice when I speak. Alka feels that the burden has fallen off as soon as the groom's family accepts her. This research paper reveals exactly what the protagonist of this story thinks and then submits to the choices of her father. Finally, her marriage is settled. They have agreed to the proposal. Her parents feel a great relief as if their responsibility is unburdened. In a typical Indian set-up, daughter is considered a burden to be eased, a problem to be solved, and a responsibility to be dispensed with. Shashi Deshpande very well presents this fact in the above discussed story.

Through this story Deshpande presents the conservative attitude of middle class family with three marriageable daughters. No one asks for the choice her. In the marriage-market a girl is treated like a consumer item which is ironically indicated by Deshpande. If she can fit in to groom's requirement table, she has more chance to be selected but at the same time she has no right to have a requirement table and demands at all. Her will and requirement has no place and not at all considered important. Critically, in a conservative middle class family, the girl has no freedom to voice her desire. It is seen that in a patriarchal Indian middle-class family, a daughter's sphere of life and activity is marginalized. She has to follow the conventions quite submissively. She is made to live at the margin, never becomes the subject. She has to follow the path decided by the elders in this story.

Thus the portrayal of woman as girls in the short stories of Shashi Deshpande presents the picture of a marginal girl who has no freedom to voice her desires. Moreover Deshpande is seriously concerned with realistic Shashi Deshpande has dealt very minutely and delicately with the daughter father role-relationship imperceptions of family role-relationship. To conclude, Deshpande captures the consciousness of a young woman who was forced into matrimony against her will.

References:

1. Deshpande, Shashi. "Women's Minds and Bodies", Indian Review Books, 2:4, 1993.
2. Oakley, A. Sex, Gender And Society. London: Temple Smith, 1972.
3. Sinha, Urvashi and Gur Pyari Jandial. "Marriage and Sexuality in the Novels of Shashi Deshpande," Shashi Deshpande: A Critical Spectrum, ed; T.M.J. Indira Mohan. New Delhi: Atlantic Publishers, 2004.
4. Vishwanath, Vanamala, A Woman's World ... All the Way! The Fiction of Shashi Deshpande, ed, R.S. Pathak. New Delhi: Prestige Books, 1998.
5. Witting, M. "The Category of Sex" Sex in Question: French Materialist Feminism?, eds, D Leonard and L. Adkins. London: Taylor and Francis, 1996.

Relationship of Man, Nature and Literature

Dr. (Mrs.) Shruti Shrivastava,*

Mrs. Ranjana Sahu**

ABSTRACT

The relationship of man and nature forms the basis of many works of literature. Nature provides the required support to man and man in turn helps the Mother Nature to grow and develop. Being the most intelligent species on earth, man has the moral responsibility to respect and protect nature and its resources. But man's desire to master the nature through science and technology has resulted in the degradation of natural environment. Nature has revealed itself in ferocious forms like earthquakes, floods, tsunami, acid rain and other natural calamities. The excessive exploitation of natural resources and unplanned growth are the reasons behind such ecological imbalances. It posed a serious threat to humankind and its survival. The literary writers, along with the environmentalists and ecologists, have shown a deep concern for the protection of natural environment. Through various genres of literature, the writers have tried to aware people in this direction. This feeling for environment gave birth to a new discipline in literature called 'ecocriticism' that deals in understanding the peculiar bond between literature and environment. Literature helps the man to learn that scientific growth is not an end in itself but just a means to the end of social, economic and spiritual well-being of humanity. The present research paper is an attempt to study the inter-dependence of man and nature in different works of literature.

'Earth has enough to satisfy every man's need, but not every man's greed.'

Mahatma Gandhi is right when he asserts this as man's desire to master the nature through science and technology is responsible for the degradation of natural environment. On the name of Industrial Revolution and scientific inventions man has made greater use of natural resources that has created an imbalance in nature. An innate blend of man, nature and literature can be perceived as a variety of novels, poems and other expressions of literature have been written on the backdrop of issues concerning nature. Nature imageries have been used by many writers to express the desires, limitations and emotions of their characters. Man is desired to respect and protect nature that has ably played the role of 'Mother' from times immemorial. The interaction between man and nature has been started since the beginning of existence. Indeed, Mother Nature has been allied to man's evolutionary process and brought him to where he is today.

Life is possible on this earth due to variations in the environment. As long as environment is suitable for living beings; growth and reproduction continues and populations of different species develop. This development continues till the ecosystem reaches its carrying capacity. At this stage, there is need to create an

*Asst. Prof. English, Govt. College, Gharghoda, Dist. Raigarh (C. G.)

**Asst. Prof. Zoology, Govt. College, Gharghoda, Dist. Raigarh (C. G.)

equilibrium between the living organisms and non-living components of the environment. Being the most intelligent species on earth, man has the moral responsibility to maintain this equilibrium or what we call the ecological balance for the survival of living beings in lack of which the nature has revealed itself in ferocious forms like earthquakes, floods, tsunami, acid rain and other natural calamities.

As the decay and damage of environment is a serious threat to the forthcoming generations, the literary writers, along with the environmentalists and ecologists, have shown a deep concern for its protection. Through various genres of literature, the writers have tried to aware people in this direction. This feeling for environment gave birth to a new discipline in literature called 'ecocriticism' that deals in understanding the peculiar bond between literature and environment. 'Eco' is short of ecology, which is concerned with the relationship of living organisms to one another and their surrounding environment. Likewise, ecocriticism is concerned with the relationship of man with his physical environment that is reflected in literature.¹

The word 'ecocriticism' first appeared in William Rueckert's essay "Literature and Ecology: An Experiment in Ecocriticism" in 1978. But it was only in the 1990s that ecocriticism emerged as a separate discipline, though it is a fact that the relationship between man and his physical environment had always been interesting to literary critics.² The interest generated in the field is not only at the scientific level but also through various forms of literary expressions. Ecocriticism is the application of ecology and ecological principles as well as the study of literature; and a theoretical approach to the interrelations of nature, culture and sometimes even supernatural elements in nature. It attempts to explore the expressions of nature in literary texts and how man and nature are mutually affected by one another.

Man is an inseparable part of this entire cosmos. And therefore, the study of man is incomplete without the understanding of his surrounding nature. Nature has provided the required support to man and man in turn helped the Mother Nature to grow and develop. He has a natural quest to find his 'roots' and be a part of the natural environment that he belongs to. Nature offers the healing touch to man entangled in tensions and burdens of the materialistic world. The greatest priest of nature, Wordsworth believes that nature can bless a responsive heart with perpetual joy. He enthusiastically shares a real-life experience in his poem "Daffodils":

For oft, when on my couch I lie,
In vacant or in pensive mood,
They flash upon that inward eye
Which is the bliss of solitude;
And then my heart with pleasure fills,
And dances with the daffodils.³

Nature became to Wordsworth the nurse, the guide and the guardian of his heart and the soul of all his moral being. To him, there is no better teacher than nature:

One impulse from a vernal wood
May teach you more of man,
Of moral evil and of good
Than all the sages can.⁴

Like Wordsworth, another Romantic poet Byron too finds delight in nature. His passion for nature is evident when he says 'I love not man the less, but nature the more.' Shelley was aware of the spirit of energy in nature when he talks about 'the West Wind' as both the destroyer and the preserver. He asks the West Wind to lift him as 'a wave, a leaf, and a cloud' because he has fallen on 'the thorns of life'. Out of this melancholy and creative despair was born the unwavering faith that makes him ask the rhetoric question 'If winter comes, can spring be far behind?'

The joys of nature are also revealed in Indian English poetry. Sarojini Naidu treats nature like the English romanticists but her poetry is imbued with Indian colour and smell and sound. The colourful Indian scenes with its Gulmohars, Champak, and Lotus buds, and parrots, koels, and nightingales give her poetry an extraordinary Indian flavour:

The serpents are asleep among the poppies,
The fireflies light the soundless panther's way
To tangled paths where shy gazelles are straying,
And parrot-plumes outshine the dying day.
O soft! the lotus-buds upon the stream
Are stirring like sweet maidens when they dream.⁵

Plants, trees, birds, rivers, sun, moon and other natural objects have always been revered and venerated by the people of India for they are associated with Gods and Goddesses in Indian mythology and Hindu traditions. From times immemorial the indebted mankind found it entirely natural to worship trees that gave them food, shelter, fire, shade, and clothing etc. Tree is immortalised by another prominent Indian poetess Toru Dutt in her famous lyric "Our Casuarina Tree". Her description of the giant tree and the creeper is truly vivid:

But gallantly
The giant wears the scarf, and the flowers are hung
In crimson clusters all the boughs among,
Whereon all day are gathered bird and bee.⁶

Thus, we can see that nature has a positive effect on man. It brings the soothing touch of tranquillity to

him and restores his inner peace. In return of these blessings of nature, man has also tried to make some positive changes in the environment by using technology to reduce pollution, controlling wildfire, finding renewable energy source, protecting species from extinction etc. But the efforts made by man are insufficient in proportion to his unethical exploitation of nature. His irresponsible actions cause irreparable damages to nature. As a result, nature has shown its immense power through natural calamities like famine, drought, flood, earthquake etc. facing which man becomes helpless. One such example can be seen in the novel So Many Hungers by Indian novelist Bhabani Bhattacharya where famine has created havoc in the lives of human-beings.

The Victorian poet and novelist Thomas Hardy depicts nature as a co-operator in the untoward workings of chance and fate. His poems and novels bring out a vivid picture of rural environment through his imaginary village 'Wessex'. He wonderfully conceptualizes the unending warfare between life struggling for self-determination and the natural forces always working against it. He has utilized the various components of nature like the Sun, the cloud, the rain, the darkness etc. not as a friend to man but as a hostile that joins hands with his relentless fate. Thus, he has used nature as a silent background to present life's miseries and the failure involved in all human endeavour in spite of the best intentions.

Many American and British writers of nineteenth and twentieth century have presented the insensitivity of modern man towards the beauties of nature. Man is responsible for destroying nature in the name of industrialization and urbanization. Sir John Betjeman has seriously raised the concern for environment in his poem "Inexpensive Progress" that is a sardonic attack on the obsession of modern man with the so-called progress at the expense of nature:

Encase your legs in nylons,
Bestride your hills with pylons
O age without a soul;
Away with gentle willows
And all the elmy billows
That through your valleys roll⁷

Similarly, W. H. Davies in his famous lyric 'Leisure' bemoans the inability of modern man in responding to the beautiful natural scenery while running his mad race of materialism:

What is this life if, full of care,
We have no time to stand and stare?
No time to stand beneath the boughs
And stare as long as sheep or cows:
No time to see, when woods we pass,
Where squirrels hide their nuts in grass.
A poor life this if, full of care,
We have no time to stand and stare.⁸

In Indian milieu, Amitav Ghosh's The Hungry Tide may be considered as one of the first novels to strongly raise ecological issues in fiction. The novel reveals the interactions between the man, the flora and fauna, and the physical environment, and emphasizes both the tragedy and the hypocrisy that were inherent in the conservation efforts in Sunderbans, an island in the Bay of Bengal. It delineates the hardships of the settlers trying to give a meaning to their lives against all the odds offered by the place. Here, the nature is depicted in its full beauty as well as ugliness. The novelist presents before us the wrath of nature and weakness of human-beings who are at the mercy of the former. The tidal torrents seem to be hungry to make life miserable on the island:

At no moment can human beings have any doubt of the terrain's hostility to their presence, of its cunning and resourcefulness, of its determination to destroy or expel them. Every year, dozens of people perish in the embrace of that dense foliage, killed by tigers, snakes and crocodiles.⁹

The other prominent Indian writer in whose work we see the dominance of nature images is Anita Desai. Nature which includes animals, plants and birds, has a strong presence in almost all her works. The connection between nature and man is crucial in her novel Cry, the Peacock where the nature imagery discovers the emotional world of the female protagonist, Maya and unravels her distorted world:

All day the body lay rotting in the sun. It could not be moved on to the veranda for, in that April heat, the reek of dead flesh was overpowering and would soon have penetrated the rooms. Crows sat in a circle around the corpse, and the crows will eat anything entrails, eyes, anything.¹⁰

The complexity of Maya's inner life is effectively brought out through the outer landscape as if her resentment against her husband for his incapability to communicate with her. Maya compares herself with the peacock that is aware of death while living and is in love with life while dying. In 'Voices in the City' the heroine is repeatedly compared to the caged bird in her house who wants to be free. Her condition reflects the plight of the imprisoned bird whose desires are neglected and whose life is for the pleasure of others. She finally commits suicide to free herself.

To conclude, it can be said that nature has often proved to be stronger than man. Man's life and nature are so interconnected that it is not possible for human-beings to separate themselves from its influence. Therefore, they have no choice but to accept both nature's privilege and adversity. And this is reciprocal as nature too is the recipient of man's good and evil actions. This is how the chain of ecosystem works in which everything is interrelated and thus, affects each other. This relationship has been reflected through writers and poets across the world, thus creating an innate blend of man, nature and literature. Literature helps the man to learn that scientific growth is not an end in itself but just a means to the end of social, economic and spiritual well-being of humanity. The literary writers wish to warn the mankind that over-exploitation of natural resources in the name of progress will eventually lead to an outburst of nature.

References

1. Tošić Jelica, essay- Ecocriticism- Interdisciplinary Study of Literature and Environment, Vol.3, No1, 2006, pp. 43 - 50, UDC 502.12, p. 43.
2. Volkmann, Laurenz Nancy Grimm, eds. Ines Detmers and Katrin Thomson, Amsterdam/New York, NY, XVII, ANSEL papers 15, 2010, p. 370.
3. Selected Poems of William Wordsworth, ed. Joseph B. Seabury, Silver, Burdett Company, New York, Boston, Chicago, 1902, p. 70.
4. www.poetryfoundation.org.>Poems and Poets>The Tables Turned by William Wordsworth.
5. www.poemhunter.com/SarojiniNaidu/Poems/Leili
6. www.poemhunter.com>Poems>ToruDutt> Our Casuarina Tree
7. www.johnbetjeman.com/inexpensive.html
8. www.davidpbrown.co.uk/poetry/william-henry-davies.html
9. Ghosh Amitav, The Hungry Tide; Harper Collins, 2011, p. 7.
10. Desai Anita, Cry, The Peacock; Orient Paperbacks, 1998, p. 7.

Relationship between Occupational Stress, Psychological Well-Being and Quality of Work Life of Government School Teacher's

Mrs. Rajani Rai*

Dr Manju Lata Choudhary**

ABSTRACT

The objective of the present study was to study the correlation between occupational stress, psychological well being and quality of work life of male and female government school teachers. 25 male and 25 female school teachers were taken in this study. Three scales Occupational Stress Index by Dr. A.K. Srivastava and Dr. A.P. Singh and Psychological Well-Being Questionnaire by Carol Ryffs and Quality of Work Life scale by Santosh Dhar, Upinder Dhar, and Rishu Roy were used. Product moment correlation was used for this study. It was found that there were no significant correlation between variables of government male teachers whereas for female teachers there was significant negative correlation between occupational stress and psychological well-being and occupational stress and quality of work life. There was no correlation of female teachers in psychological well-being and quality of work life.

Introduction-

The present era has seen rapid development in all fields of life. The scientific development and specialization has increased the expectations of all persons, the quality of life and technical advantage has made drastic changes of work life. The present general scene shows that there is a lot of competition among people working in different occupations. It is also seen that even qualified people are not able to get jobs which are in tune with their qualifications. There is a lot of competition among job seekers. Occupational stress, psychological well-being and quality of work life are some of the important variables that affect an individual's job satisfaction ultimately affecting life satisfaction. Without greater degree of life satisfaction it is very difficult for any person to have amicable adjustment. Occupational stress is a widespread construct where job related issues interact with the operator to either enhance or disrupt the physiological or psychological conditions.

The harmful effects of occupational stress are known as key problems for either employees or organizations. For employees, stress regularly contributes to the burn-out, risk of accidents and illness like

* Research Scholar, RDVV, Jabalpur (M.P.)

**Retd. Principal, Home Science College, Jabalpur (M.P.)

hyper-tension, coronary heart disease and severe depression. Randall (1998) mention that occupational stress is the interaction of the work conditions with the characteristics of the worker such that the demands of work exceed the ability of the worker to cope with them.

Psychological well-being is described as the quality of life of a person. It includes happiness, peace, fulfillment and life satisfaction. Gargand Rastogi, (2009) say that psychological well-being is concerned within individual's judgement regarding his/her continual heppiness, satisfaction with his/her psychological and mental health and how it relates to some psychological factors such as life satisfaction or work satisfaction.

Quality of work life refers to the level of happiness or dissatisfaction with one's career. Those who enjoy their careers are said to have a high quality of work life, while those who are unhapy or whose needs are otherwise unfulfilled are said to have a low quality of work life. Quality of work life is viewed as an alternative to the control approach of managing people.

It is obvious that people have to work so that they earn for their own living along with a support to the family. There are individual differences and people are with different psychological characteristics, so it is the case of with the world of work, different jobs have different demands in terms of the nature of work which can be accomplished only through certain characteristic of the person. The demands of the job and characteristics of the individual should have an adequate balance so that the individual is able to work according to his optimum ability.

Mabekoje Seasonala (2003) found that self-esteem, social support and agreeableness were the significant predictors of teachers psychological well-being neither, extraversion nor self-efficacy was predictive. Okul agretmenlerin, Ilgan Abdurrahman et al (2015) found that there were some differences in quality of school work life, levels of teachers, in connection with some demographic variables. Further stepwise linear regression revealed that quality of school work life rating described teachers psychological well-being. Gowrie, George (2014) found that there was a moderate to high correlation among the quality of work life factors and collegial relations among teachers had the greatest influence on their work life in schools. Human relations quality of work life factors such as social integration, intrinsic characteristics and student related issues were the most important dimensions of teachers quality of work life.

Objectives

- (1) To study correlation between occupational stress, psychological well-being and quality of work life of male government school teachers.

- (2) To study correlation between occupational stress, psychological well-being and quality of work life of female government school teachers.

Hypothesis

- (1) There is no significant correlation between occupational stress, psychological well-being and quality of work life of government male school teachers.
- (2) There is no significant correlation between occupational stress, psychological well-being and quality of work life of government female school teachers.

Sample Government School teachers

Group	N
Male	25
Female	25
Total	50

Tools

- (1) Occupational Stress Index Dr. A.K. Srivastava and Dr. A.P. Singh.
- (2) Psychological Well-Being Questionnaire - Carol Ryffs
- (3) Quality of Work Life Scale-Santosh Dhar, Upinder Dhar and Rishu Roy.

Method Survey method was adopted for the present study. Data was collected by administering the scale on the sample and by statistical analysis of data conclusions were drawn.

Analysis The analysis and discussion of results is presented below

Table No. 1

The results of correlation between variables of government male school teachers

Variables	N	r	'P'-Value
OS and PWB	25	-0.24	>0.05
OS and QWL	25	-0.15	>0.05
PWB and QWL	25	-0.12	>0.05

Degree of freedom - 23

Minimum value at 0.05 level - 0.38

Minimum value at 0.01 level - 0.48

The result of correlation between the variables occupational stress-psychological well-being and occupational stress-quality of work life and psychological well-being and quality of work life, show that of government school male teachers the correlation are negative and statistically insignificant.

Thus, from the above result it may be concluded that there is no significant correlation between different variables of government male school teachers.

Table No. 2

The results of correlation between variables of government female school teachers

Variables	N	R	'P'-Value
OS and FWB	25	-0.94	<0.01
OS and QWL	25	-0.39	<0.05
PWB and QWL	25	+0.0074	>0.05

Degree of freedom – 23

Minimum value at 0.05 level - 0.38

Minimum value at 0.01 level - 0.48

The results of correlation between the variables of female government school teachers show that there is negative significant correlation between occupational stress and psychological well-being, occupational stress and quality of work life. They shows that if there is occupational stress then it affects psychological well-being and quality of work life. There is no significant correlation between psychological well-being and quality of work life.

The results suggest in case of male school teachers, the negative relationship between occupational stress and psychological well-being along with occupational stress and quality of work life is insignificant, so also it is the case with psychological well-being and quality of work life also. The obtained values of correlation are vary low. In the case of female teachers the correlation between occupational stress and psychological well-being and occupational stress and quality of work life are negative and significant. This shows that if women teachers are under stress the psychological well-being and quality of work life suffers adversely, this may be due to role conflict in working women where they have dual responsibility of looking after the family along with work at the work place. Even though they are good in terms, and they are not able to perceive the work environment in a positive manner. This might affect their performance in the work place.

In the case of government schools teachers both male and female, the life of teachers follow as a set routine guided by practically the same nature of work and responsibility. Their timing are fixed and they do not have to bother about administration. In general the male teachers may be said to be happy go lucky type persons. They work according to norms and the daily schedule as outlined in the daily time table. The teachers teach honestly, so that the students not only gain higher grades but also we able to use knowledge gained through their instructions. Probably these may be the reason for insignificant results in relationship between variables in male teachers.

Conclusion There was no significant corelation between variables of government male teachers, whereas for female teachers there was significant negative correlation between occupational stress and psychological well-being and occupational stress and quality of work life. There was no correlation of female teacher's of psychological well-being and quality of work life.

References

1. Kapil, H.K. (2012).Anusandhan Vidhya. Agra : H.P. Bhargava Book House.
2. Kothari, C.R. (1990).Research Methodology Method and Techniques, published by V.S. Johri for Willey Eastern Limited.
3. Mabekoje Seasonola (2003), "Psychological well-being among Nigerian Teachers', Journal of Research in Counselling Psychology", Vol. 9, No. 1, 48.57.
4. Okul, Oguetmenlerin & Ilgan Abdurrahman et al. (2015). The Relaitonship between Teacher's Psychological well-being and their Quality of School work life, The Journal of Happiness and Well-being, 3(2), 159-181.

ऑनलाइन विपणन [Online Marketing] भारत में भविष्य

श्रीमती प्रियंका ताम्रकार *

शोध सार

बढ़ती प्रतिस्पर्धा एवं तकनीकी संचार माध्यमों के विकास के कारण संपूर्ण विश्व का बाजार आज उपभोक्ताओं के लिए खुला हुआ है। भारत के विपणन पर इसका प्रभाव दिखाई देता है, परंतु इस पर सामाजिक, नैतिक, कानूनी अवधारणा का प्रभाव दिखाई देता है। जिससे आनलाईन विपणन में भारत विश्व में एक सक्रिय उपभोक्ता के रूप में उभर कर सामने आया है, और कहा जा सकता है कि जिस प्रकार भारत विकासशील देश से विकसित देश की ओर बढ़ रहा है उसी प्रकार आनलाईन विपणन भी भारत में अपनी विकसित अवस्था की ओर सक्रिय है।

वर्तमान में व्यक्ति तथा उसके आस-पास के क्षेत्र पर बढ़ते तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी प्रवर्तन का प्रभाव दिखाई देता है। उत्पादक हो या उपभोक्ता सभी तकनीकी के युग के महत्व को स्वीकार कर चुके हैं। इसके परिणामस्वरूप आज का व्यवसायिक क्षेत्र केवल एक शहर, राज्य या राष्ट्र तक सीमित नहीं है वरन् विश्व के कोने-कोने में वस्तु का विक्रय करने वाले विक्रेता तथा उसे खरीदने वाले क्रेता फैले हुए हैं। वे सीमाविहीन विश्व धरातल के आपस में सौदा (लेन-देन) करके व्यापार-व्यवहार को अंजाम में दे रहे हैं।

प्रौद्योगिकीकरण से व्यापारी वर्ग भी एक-दूसरे के साथ सूचनाओं का संप्रेषण कर सकते हैं। जिससे उनके लाभों में परस्पर वृद्धि होगी। वस्तु का एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचना और उपभोक्ता को संतुष्ट करना विपणन के अंतर्गत आता है और जब यही कार्य विद्युतीय संचार माध्यमों के द्वारा संपन्न किया जाता है उसे इस प्रकार संपन्न होने वाली "व्यापारिक विपणन प्रणाली" को Online विपणन (इन्टरनेट विपणन) कहा जाता है।

उदा. मोबाइल, वेब पेज, एस एम एस के जरिए, वेबसाइट के जरिए उपभोक्ता एवं उत्पादक (व्यापारी) के मध्य होने वाला व्यवहार जिसमें उपभोक्ता वेबसाइट पर उत्पादक के उत्पादों को देखकर उसका मूल्य एवं किस्म देखकर वस्तु खरीदने हेतु इलेक्ट्रॉनिक माध्यम का प्रयोग करता है।

स्वरूप :- आज Online Marketing मुख्य रूप से B2B (Business to Business), B2C (Business to Customer), C2B (Customer to Business) आदि स्वरूपों में प्रचलित है।

भारत में विपणन के क्षेत्र से संबंधित अवधारणा :- भारत में मुक्त व्यापार तथा विकास शैली से मिली-जुली व्यापार प्रणाली प्रचलित है। जिसके कारण ही गत वर्षों से भारत की व्यापार व्यवस्था सुदृढ़ हुई है आज का भारत विदेशी कंपनियों के लिए एक लाभदायक बाजार है जहां हर वर्ग का उपभोक्ता मौजूद है।

तथा प्रत्येक उत्पाद के लिए ग्राहक उपलब्ध है। एक ओर जहां बहुराष्ट्रीय कंपनियों में भारतीय बाजार में प्रवेश पाने की होड़ लगी है वही दूसरी तरफ व्यवसायिक क्षेत्र में विदेशी निवेश की संभावनाओं को बल मिला है साथ ही भारत सरकार द्वारा भी IDBI जैसी संस्थाएँ उद्योगों के विकास के लिए प्रारंभ की गई है। इसके साथ ही इन परिवर्तित परिस्थितियों में विपणन के क्षेत्र को उचित दिशा प्रदान करने में सामाजिक, नैतिक एवं कानूनी घटकों का महत्वपूर्ण स्थान है।

सामाजिक अवधारणा :- सामाजिक अवधारणा कहती है कि उद्यमियों को अपने उत्पादों का विक्रय करते समय सामाजिक पहलू पर भी ध्यान देना चाहिए। Commerce के क्षेत्र में आज के उद्योगपति इस तथ्य को भली प्रकार जानते हैं कि दीर्घकालीन लाभ तभी प्राप्त किया जा सकता है जब उपभोक्ता के साथ-साथ समाज को भी संतुष्टि प्रदान की जाए इसी बात को ध्यान में रखते हुए

* सहायक प्राध्यापक, जबलपुर पब्लिक कॉलेज, जबलपुर (म.प्र.)

उनकी Online वस्तुओं के मूल्य बाजार में बेची जा रही वस्तु के मूल्य से कम होते हैं। साथ ही वे उसकी गुणवत्ता को भी बनाए रखते हैं अर्थात् ऑनलाइन विपणन के माध्यम से जो वस्तुएँ बेची जाती हैं उनकी किस्म, रंग, आकार, क्षमता वैसी ही होती है जैसी विज्ञापन में या वेबसाइट पर प्रदर्शित की जाती है। इसके अलावा व्यवसायी समाज के प्रति जागरूक भी हुए हैं वे संसाधनों का उचित दोहन करते हैं ताकि समाज की आगामी पीढ़ी के लिए उनका अस्तित्व बना रहे।

सामाजिक कल्याण से प्रेरित विपणन नीति इसी बात पर बल देती है कि उद्यमी को विपणन कार्य करते समय प्रदूषण नियंत्रण तथा पर्यावरण, संरक्षण एवं पारिस्थितिकीय संतुलन बनाए रखना का प्रयास किया जाए इसी विपणन अवधारणा के अंतर्गत उद्यमियों द्वारा हरित विपणन, पर्यावरण मित्र विचारधारा पर आधारित उत्पादों का विपणन शुरू किया जाता है। जैसे वर्तमान में पेन्ट, वार्निश आदि में ऐसे पदार्थ मिलाए जा रहे हैं जो Eco Friendly है।

नैतिक अवधारणा :- ऑनलाइन मार्केटिंग के क्षेत्र में नैतिक का विशेष स्थान है। प्रतिदिन बढ़ती प्रतियोगिता के कारण नैतिकता का पतन हो रहा है इसके लिए आवश्यक है कि व्यवसायी अपने एवं ग्राहकों के मध्य हो रहें विपणन व्यवहार में नैतिकता का पालन करें। ऑनलाइन विपणन में पूरा लेन-देन संचार के माध्यमों द्वारा होता है जिससे उत्पादक एवं उपभोक्ता दोनों एक दूसरे से अनभिज्ञ होते हैं ऐसी स्थिति में विश्वास ही व्यापार की आधारशिला होता है।

अतः उत्पादक को सही समान ही ग्राहक तक पहुँचाना चाहिए। इसके अलावा इस विपणन में नैतिकता का गुण इसी बात से प्रकट होता है कि इसमें थोक एवं फुटकर व्यापारियों की मध्यस्थता को समाप्त कर दिया गया है जिससे वस्तुओं के मूल्यों में होने वाली अनावश्यक वृद्धि में कमी आई है।

उदाहरणार्थ - (जिस वस्तु का उत्पादन समय मूल्य 15 होता है वह थोक व्यापारी एवं फुटकर व्यापारी के हाथों में पहुँचते तक 50) की हो जाती है और उसमें से वे अपना लाभ जोड़कर ग्राहक को वह वस्तु 80-100 रु. में प्राप्त होती है। जिससे ग्राहक पर अनावश्यक आर्थिक भार पड़ता है।

कानूनी अवधारणा :- इसी के चलते सरकार द्वारा का Plastic Money, Credit Card, debit card का उपयोग को प्राथमिकता प्रदान की जा सके। (क्योंकि कागज की मुद्रा के अपव्यय को रोकने से उनके निर्माण पर अनावश्यक खर्च होता था।) साथ ही इनके उपयोग से बैंकिंग क्षेत्र की व्यवसाय में सक्रियता बढ़ी है। ऑनलाइन विपणन के माध्यम से सरकार के राजस्व में भी वृद्धि होती है क्योंकि विचोलियों की भूमिका समाप्त हो गई है तथा सभी भुगतान बैंकिंग माध्यम (credit card/debit card/cheque) के माध्यम से होते हैं।

भविष्य - ऑनलाइन विपणन की बढ़ती लोकप्रियता एवं लोगों का इसके प्रति दृष्टिकोण इसे सकारात्मकता प्रदान करता है। दिन प्रतिदिन बढ़ती व्यस्तता तथा विचोलियों के प्रभाव के कारण ऑनलाइन विपणन समय बचाने वाले साधन के रूप में उपलब्ध है। यह कहा जा सकता है कि इसका भारत में भविष्य उज्ज्वल है।

निष्कर्ष - उपरोक्त बिन्दुओं के अध्ययन से स्पष्ट है कि सामाजिक, नैतिक और कानूनी प्रत्येक दृष्टि से ऑनलाइन विपणन उत्पादक एवं उपभोक्ता के मध्य विश्वस्त कड़ी की भूमिका निभा रहा है। आवश्यकता केवल उपभोक्ता की जागरूकता की हैं। ताकि वह उत्पादक से संबंधित Reviews को जांचकर ही विपणन कार्य करें, ताकि अनावश्यक हानि से बचा जा सके। वर्तमान में मुद्रा विकेंद्रीकरण के कारण प्लास्टिक मनी का प्रचलन बढ़ गया है। गोवा, महाराष्ट्र, का अंकोला जैसे राज्य और शहर पूर्णतः केशलेस घोषित हो गये हैं। ऐसी स्थिति में यह कहना गलत नहीं होगा कि भारत में ऑनलाइन विपणन का भविष्य बेहतर है।

संदर्भ ग्रंथ

1. बतरा, राजीव (2011) "विज्ञापन प्रबंधन" पोरलिंग किंगडरेसली प्रा.लि. पृ. क्र. 296
2. शर्मा, ओ.पी. और अन्य (2014) उपकार प्रकाशन पृ.क्र. 176
3. शर्मा, बजाज "ई-कॉमर्स" (2013) पृ.क्र. 314

भारत में ऑटोमोबाइल कंपनियों का परिचय

सतवीर कौर आहलुवालिया*

परिचय:—भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास व विस्तार में ऑटोमोबाइल उद्योगों का एक बहुत ही उभरता हुआ स्वरूप है। उसने भारतीय अर्थव्यवस्था को ऊँचाइयों तक पहुंचाया है। पीटर ड्रकर ने “उद्योगों का उद्योग” कहकर ऑटोमोबाइल उद्योग को सम्बोधित किया है।

UNIDO इंटरनेशनल ईयर बुक के अनुसार भारत पहले 15 ऑटोमेकर्स में से एक हैं। वर्तमान में कार उत्पादन में भारत का 11वाँ स्थान है। तथा कमर्शियल वाहन उत्पादन में 13वाँ स्थान है। जिसमें दुपहिया, चारपहिया वाहन दोनों शामिल हैं। इसी के साथ भारत में कार बनाने वालों को विश्व भर में प्रशंसा मिल रही है।

भारत का ऑटोमोबाइल के क्षेत्र में सम्पूर्ण विश्व में स्थान:—

कोई भी क्षेत्र हो भारतीयों ने प्रत्येक स्थान पर अपनी अमिट छाप छोड़ी है। विश्व स्तर पर अपनी उपस्थिति प्रत्येक स्थान पर दर्ज करवाई है। ऑटोमोबाइल सेक्टर का विश्व में स्थान निम्नलिखित है—

विश्व में स्थान

क्र.	खण्ड	विश्व में स्थान
1	दुपहिया वाहन	दूसरा
2	छोटी कारे	तीसरा
3	वाणिज्यक वाहन	पाँचवा
4	इंजन निर्माता	पाँचवा
5	कार निर्माता	पन्द्रवाँ
6	वाहन निर्माता संख्या	नौवा
7	दुपहिया/तिपहिया वाहन निर्माता संख्या	सौलवाँ
8	ट्रेक्टर	चौहदवाँ

उपर्युक्त तालिका को देखकर निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग विश्व में बढ़ते हुए स्तर पर कार्यरत है। इसने ना केवल निरंतर विकास किया बल्कि भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग को निरंतर सफलता की ऊँचाइयों तक बढ़ती हुई श्रेणी भी प्रदान की है।

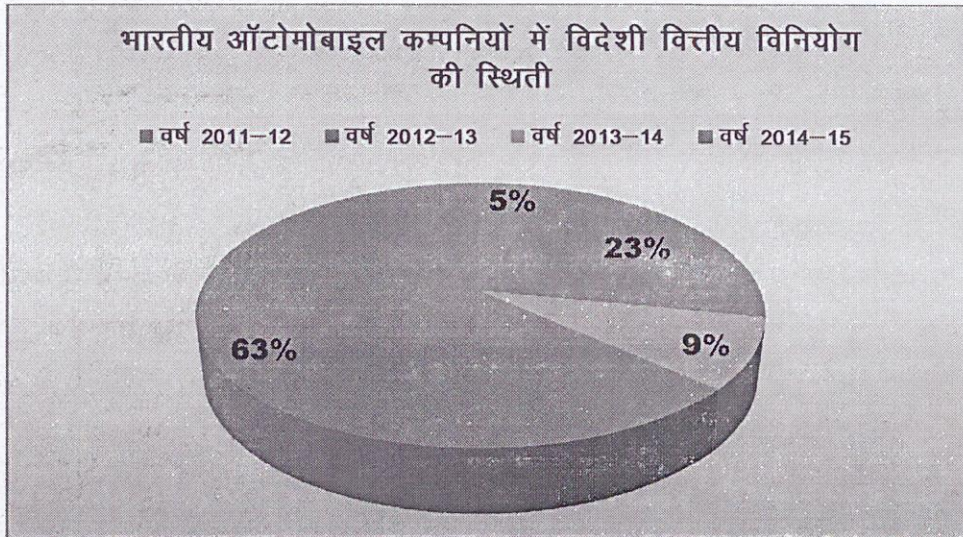
* सहायक प्राध्यापक श्री गुरुनानक महाविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

भारतीय ऑटोमोबाइल कम्पनियों में विदेशी वित्तीय विनियोग की स्थिति

वर्ष 1991 की आर्थिक नीति के पश्चात् अनेक उद्योगपतियों व निवेशकों व विदेशी संस्थाओं ने ऑटोमोबाइल सेक्टर में निवेश रुचि दिखाई है।

सारणी

वर्ष	निवेश
वर्ष 2011-12	711
वर्ष 2012-13	3422
वर्ष 2013-14	1258
वर्ष 2014-15	9304

**ऑटोमोबाइल सेक्टर में रोजगार के अवसर**

दुनिया की सबसे बड़ी ऑटोमोबाइल इंडस्ट्री वाले देशों में से एक भारत है। ऑटो प्रोडक्ट्स के बढ़ते उत्पादन और आयात के बढ़े आंकड़ों ने देश को ग्लोबल इंडस्ट्री में आगे लाकर खड़ा किया है, अच्छी बात यह है कि रोजगार देने में भी यह क्षेत्र अग्रणी है। हाल में लॉन्च हुए ऑटोमोटिव मिशन प्लान (एएमपी) II के अनुसार 2026 तक ऑटोमोटिव सेक्टर 65 मिलियन आय व रोजगार में वृद्धि की रिपोर्ट भी कुछ ऐसी ही उम्मीदें बंधा रही है, जिसके मुताबिक 2022 तक ऑटोमोबाइल/मैकेनिकल इंजीनियर्स से लेकर एमबीए, फाइनेंस, अकाउंट्स, सेल्स, आईटी जैसे अलग-अलग बैकग्राउंड के उम्मीदवारों के लिए यहाँ भविष्य उज्वल है।

रोजगार के अवसरों में वृद्धि के कारण

2015 के अंत तक भारत विश्व में चौथा सबसे बड़ा ऑटोमोटिव मार्केट होगा। सोसायटी ऑफ इंडियन ऑटोमोबाइल मैनुफैक्चर्स (एसआईएम) के अनुसार, भारतीय ऑटोमोटिव इंडस्ट्री अगले दस सालों में टर्नओवर में चार गुना ग्रोथ की उम्मीद कर रही है। प्रमुख भारतीय कंपनियों के अलावा कई ग्लोबल ऑटो कम्पोनेंट्स निर्माता जॉइंट वेंचर्स या अन्य किसी तरह से देश में अपनी

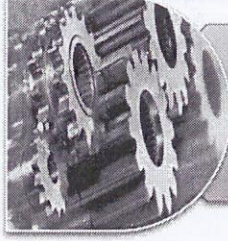
उपस्थिति बनाए हुए हैं। इतना ही नहीं आने वाले सालों में भारत और अन्य इस सेक्टर में बढ़ता निवेश यहाँ रोजगार में बढ़ोतरी का मुख्य कारण है। नए प्रोजेक्ट्स और तकनीकी विकास के चलते यहाँ ज्यादा कुशल और अनुभवी मानव संसाधन की जरूरत है। यह सेक्टर मैनुफैक्चरिंग इंडस्ट्रीज, प्रॉडक्शन प्लांट्स, सर्विस सेंटर्स, ट्रांसपोर्ट कॉरपोरेशंस, इंश्योरेंस कंपनियां हायर करती हैं। मैनुफैक्चरिंग उम्मीदवारों को नौकरी देता है। ऑटोमोबाइल सेक्टर डिजाइनर/इंजीनियर्स की मांग भी बढ़ा रहा है। इसके अलावा मैटलर्जिस्ट इस इंडस्ट्री में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। एमबीए ग्रेजुएट्स के लिए यहां सेल्स एंड मार्केटिंग, सप्लाय चैन और फाइनेंस में अवसर हैं। इसके अलावा सॉफ्टवेयर डेवलपमेंट इंजीनियर्स, अकाउंट्स एग्जीक्यूटिव्स, क्वालिटी सुपरवाइजर्स, ऑटोमोबाइल टेक्नीशियन, सेल्स एग्जीक्यूटिव, कॉर्पोरेट कम्प्यूनिकेटर्स व पीआर एग्जीक्यूटिव्स के लिए भी बड़ी संख्या में जॉब्स हैं।

उद्योग परिदृश्य:-

एसआईएम के अनुसार, 2026 तक ऑटोमोबाइल इंडस्ट्री का 4.64 लाख करोड़ का मौजूदा आउटपुट 16.16-18.89 लाख करोड़ में तब्दील होगा। बड़े ऑटोमोटिव क्लस्टरों के विकसित होने से इस क्षेत्र को मजबूती मिली है-

भारत में रोजगार के अवसरों हेतु प्रमुख शहर:-

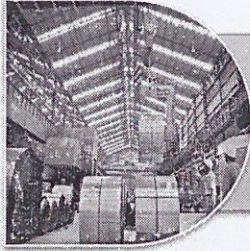




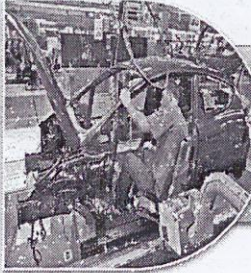
इंडस्ट्रियल आउटपुट के लिहाज से तमिलनाडु देश में सबसे आगे है। राज्य में 7 प्रमुख ऑटोमोबाइल कम्पोनेंट मैन्यूफैक्चरर्स हैं।



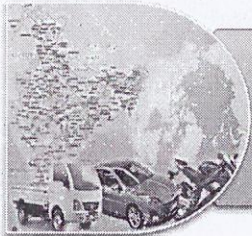
ड्रेटॉइट ऑफ इंडिया कहलाने वाली चेन्नई एक मिनट में तीन कार और प्रत्येक 90 सैंकड में एक कॉमर्शियल व्हेकल की निर्माण क्षमता के साथ छोटी कारों के लिए ग्लोबल एक्सपोर्ट हब बन चुकी है।



पैसेंजर कार, मोटरसाइकिल, ट्रैक्टर उत्पादन में हरियाणा सबसे आगे है, जो कुल पैसेंजर कार व दोपहिया वाहनों के उत्पादन में 50 प्रतिशत योगदान देता है।

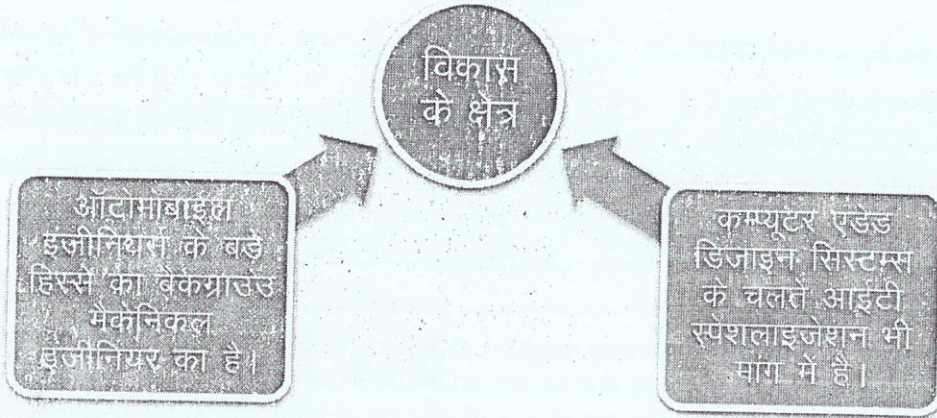


गुजरात के साणंद, हंसलपुर और विट्टलपुर बेल्ट में अगले 6.8 सालों में मारुति सुजुकी, टाटा मोटर्स, फोर्ड इंडिया और होंडा कार्स लगभग 2.2 मिलियन पैसेंजर व्हेकल्स उत्पादित करेगी।



भारत विश्व में दोपहिया वाहनों का दूसरा सबसे बड़ा और कॉमर्शियल व्हेकल्स का चौथा सबसे बड़ा निर्माता है। देश की मैन्यूफैक्चरिंग जीडीपी में ऑटोमोबाइल इंडस्ट्री का योगदान 22 प्रतिशत है।

“नए प्रोजेक्ट्स और तकनीकी विकास के चलते देश का ऑटोमोबाइल सेक्टर विकास के रास्ते पर है जहाँ बड़ी संख्या में कुशल और अनुभवी मानव संसाधन की आवश्यकता है।”
मैन्यूफैक्चरिंग, डिजाइनिंग आरएंडडी, सेल्स एंड मार्केटिंग, बिजनेस डेवलपमेंट, डिस्ट्रीब्यूशन चेन डेवलपमेंट में ग्रोथ के अवसर तलाशे जा सकते हैं।



रोजगार की संख्या

करोड़ से ज्यादा लोग ऑटोमोबाइल सेक्टर में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से काम कर रहे हैं। रोजगार देने वाले क्षेत्रों में ओइएम, ऑटो कम्पोनेंट्स, कच्चे माल की फैक्टरी, ऑटोमोबाइल डीलर्स, सर्विस सेंटर आदि शामिल हैं।

एएमपी (I) 2006-16 रोजगार निर्माण लक्ष्य 2.5 करोड़	एएमपी (II) 2016-26 रोजगार निर्माण लक्ष्य 6.5 करोड़
ऑटोमोटिव सेक्टर टेलिकॉम के बाद रोजगार देने वाला दूसरा बड़ा क्षेत्र है, जहाँ 56 प्रतिशत वर्कफोर्स काम कर रही है।	
मैन्यूफैक्चरिंग में 76 लाख की वर्कफोर्स में से 72 प्रतिशत कर्मचारी कम्पोनेंट सेक्टर में काम कर रहे हैं।	

संदर्भ ग्रंथ:-

1. ऑटोमोबाइल मिशन योजना 2006-2016
2. मध्यप्रदेश इंजीनियरिंग ऑफ ऑटो सेक्टर
3. Society of the Indian Automobile Industries (SIAM) Reviews 2014
4. SIAM- वार्षिक रिपोर्ट- 2015
5. The Indian Automotive Industry- A Perspective Tata Motors
6. www.Anjeels.com/auto/indian/automotive/history page no 104
7. www.ibef.com

DIGITAL LIBRARY- ITS NEED

Mrs. Preeti Sahu*

ABSTRACT

Today we talk about new activities, methods and technology used in digitization of digital libraries. It set out the detailed plans required in the process and guidance for the practicing Librarians. Digital Libraries are being created today for diverse communities and in different fields e.g. education, science, culture, development, health, governance and so on. With the availability of several free digital Library software packages at the recent time, the creation and sharing of information through the digital library collections has become an attractive for library and information professionals around the world.

INTRODUCTION : Digital Libraries are being created today in different fields e.g. education, science, culture, development, health, governance and so on. With the availability of several free digital Library software packages at the recent time, the creation and sharing of information through the digital library automation has helped to provide easy access to collections through the use of computerized library. Digital libraries differ significantly from the traditional libraries because they allow users to gain an on-line access to and work with the electronic versions of full text documents and their associated images. Many digital libraries also provide an access to other multi-media content like audio and video.

What are Digital Libraries?

A digital library is a collection of digital documents or objects. Smith (2001) defined a digital library as an organized and focused collection of digital objects, including text, images, video and audio, with the methods of access and retrieval and for the selection, creation, organization, maintenance and sharing of collection. Though the focus of this definition is on the document collection, it stresses the fact that the digital libraries are much more than a random assembly of digital objects. They retain the several qualities of traditional libraries such as a defined community of users, focused collections, long-term availability, the possibility of selecting, organizing, preserving and sharing resources. The digital libraries are sometimes perceived as institutions, though this is not as dominant as the previous definition.

The following definition given by the Digital Library Federation "Digital Libraries are organization that provide the resources, including the specialized staff to select, structure, offer intellectual access to interpret, distribute, preserve the integrity of and ensure the persistence over time of collections of digital works so that they are readily and economically available for use by a defined community or set of communities." (DLF 2001) The point in this definition is on the digital library as a dynamic, growing organism.

Digital libraries bring significant benefits to the users through the following features:

- i. Improved access Digital libraries are typically accessed through the Internet and Compact Disc-Read Only Memory (CD-ROM). They can be accessed virtually from anywhere and at anytime. They are not tied to the physical location and operating hours of traditional library.

* Librarian , Jabalpur Public College , Jabalpur (M.P.)

- ii. Wider access- A digital library can meet simultaneous access requests for a document by easily creating multiple instances or copies of the requested document. It can also meet the requirements of a larger population of users easily.
- iii. Through the appropriate metadata and information exchange protocols, the digital libraries can easily share information with other similar digital libraries and provide enhanced access to users.
- iv. Exact copies can easily be made, the digital libraries facilitate preservation of special and rare documents and artifacts by providing access to digital versions of these entities.

Most digital libraries share common functional components. These include:

- i. The typical processes covered in this component include the selection of documents to be added, the subscription of database and the digitization or conversion of documents to an appropriate digital form.
- ii. The key process involved in this component is the assignment of the metadata (bibliographic information) to each document being added to the collection.
- iii. This component carries out the indexing and storage of documents and metadata for efficient search and retrieval.
- iv. This is the digital library interface used by the end users to browse, search, retrieve and view the contents of the digital library. It is typically presented to the users as Hyper-Text Mark-up Language. These mentioned components are the important characteristic of digital library, which differ it from others collections of online information.

Digitization as the process of taking traditional library materials that are in form of books and papers and converting them to the electronic form where they can be stored and manipulated by a computer. They maintained that-

- i. Digitization means no new buildings are required; information sharing can be enhanced and redundancy of collections reduced.
- ii. Digitization leads to the development of Internet in digitalized, based libraries. As Internet is now the preferred form of publication and dissemination.
- iii. Digital materials can be sorted, transmitted and retrieved easily and quickly.
- iv. Access to electronic information is cheaper than its print counterpart when all the files are stored in an electronic warehouse with compatible facilities and equipment.
- v. Digital texts can be linked, thus made interactive; besides, it enhances the retrieval of more information.

In the light of the following advantages, it is natural today to find more information being digitized and uploaded into the Internet or Compact-Disc Read Only Memory (CD-ROM) in order to be made correspondingly accessible globally.

Why Digitization is Important?

There are three main needs for digitization:-

- i. To preserve the Documents: That is to allow people to read older or unique documents without damage to the originals.
- ii. To make the documents more accessible: This is to serve the existing users better; e.g. to allow the users to search the full text of the documents or to serve more users than envisaged in remote locations, example,

more than one person at a time

- iii. To reuse the documents. It means to convert documents into different formats; for example to use images in a slideshow and to adopt the content for a different purpose. Digitizing documents can take a lot of time, effort and money. Smith (2001), narrated the following reasons that should be considered before going into digitization.

Reasons to be Considered

- i. Is it worth digitizing? Do the documents contain the information that is valuable enough to warrant the costs of digitization? There is no point digitizing the documents that are already out of date, no matter how bulky they, but it is worthy to digitize the old, unique documents that can be easily damaged so that the people can be allowed to use them without handling the originals. These unique documents are sometimes called the heritage documents.
- ii. your audience? If there are only few users, or may be there are large numbers of potential users, but they do not have computers to access the digital library, they can be served by sending them photocopies. It may be difficult to judge the demand for documents. It is, however; wise to get other people's opinions. Ask the potential users of the documents what they see as their priorities.
- iii. Do the documents form a collection? It is important to verify if the documents form a collection. In fact, the documents in a digital library should have something in common like a common subject focus
- iv. How easy is it to digitize documents? Another important factor to take into account is how easy it will be to digitize the documents. Not all the hard copy documents can be easily converted to electronic format. There is the need to check the physical characteristics of the documents to understand how easy it will be to digitize them. If you have a lot of documents that are hard to digitize, you might choose not to include them in the digital library. It is advisable to put them in the image files, rather than in the searchable text document.

To Creating a digital library collection involves the following steps: planning, implementation and promotion. These are essential if the finished product is to successfully meet the user's needs and conform with the accepted quality standards.

Planning

Planning mainly involves identifying various tasks related to creating a digital library collection, developing strategies for handling these tasks, identifying required resources and formulating a timeline for accomplishing these tasks. If there is a need to have a large digital project, you may consider conducting a feasibility study to assess the viability of the project before detailed planning. The outcome of the feasibility study could be a formal proposal for obtaining management approval or grant for the project.

- a. The first step in planning a digital library collection development project is to specify the need for creating the digital library collection, its purpose and target user community. You should indicate if management, the users or others have expressed this need and defined what this need is. The purpose could be improving preservation of some rare or delicate materials, improving access to and the visibility of certain material or facilitating re-use of documents. It is important to identify the target user community for a digital library collection and their profile
- b. There is the need to define the source material that constitutes the digital library collections and the key attributes of this source material. Examples of source material include project reports, staff

publications, working papers, theses, dissertation, audio and video lectures, songs and musical scores etc. There is also the need to specify what portion of the material is to be digitized and if all the material or only a sub-set will be covered in the digital collection. Remember to assess copyright restrictions.

- c. Define the key features of the digital library collection you plan to build. Identify the nature of the collection.
- d. The important task in creating a digital library collection is the conversion of the source materials available in hardcopy into a digital format. There should be a clear cut statement about the related requirements and their processes, namely:
 - i. How to convert the source material into required digital format.
 - ii. What are the digitization requirements?
 - iii. The workflow involved in digitizing the source material.
- e. Identify the resources and money required for creating and maintaining digital collections.

There is a need to identify:

- i. What type of information technology infrastructure is required for establishing and maintaining the digital collections?
 - ii. What are the personnel requirements and
 - iii. What are the financial requirements involve for setting up and maintaining the collection.
- f. Finally, there is the need to define how the project is going to be implemented and what the major milestones and time requirements are? Implementation Planning is followed by implementation. That is getting down to the actual steps required to set up the collection. This means that there must be a need to obtain the management approval for the plan and the required resources before proceeding with the implementation. There is a need to identify and designate a project manager to lead the implementation of the digital project. For large digital library projects, it is essential to have a full time project manager for the project period. The Implementation of a digital library project involves the following activities.
- i. Establish the project team
 - ii. Set up the Information Technology infrastructure
 - iii. Procure and install digital library software
 - iv. Finalize policies and specifications
 - v. Complete arrangement of workflow for digitization
 - vi. Set up the digital library collection site in case of Internet distribution

Promotion and Provision of Services The digital library collection created should be visible, and it should provide an easy access for users. One-way of achieving this is to include links to the collection site in the appropriate pages of the library website and other related on-line services in the organization. In addition to, or in the absence of remote on-line access to the digital collection, there is the need to explore other modes of providing access to the digital collection. These may include:

- i. Setting up local public access computers on the library Local Area Network.
- ii. Provision of e-mail based services and 11.
- iii. CD-ROM based distribution of the collection.

Infrastructure Access to a digital library collection can be provided on-line or off-line. The On-line access today typically means that the client uses a web browser on a desktop computer or laptop and access the collection by connecting to the digital library website over the Internet. The On-line access requires a connection to the Internet or to an internal network (Intranet). In Off-line access, the digital library is not accessible over a network. One way of providing an Off-line access to a digital library collection is to receive and respond to the user queries over e-mail. Another way is to distribute the digital library collection on a CD-ROM.

Since the access to the digital library is easy, compared to a physical library, more users are likely to access it. If the digital library does not meet the expectations of the users in terms of currency and quality of content, they will lose confidence, and it is likely for them not to visit the digital library again.

It is therefore important to assign the personnel with the right skills and attitude to handle the various tasks associated with the digital library project. Broadly speaking, the personnel will be required for the following tasks:

- i. Project management.
- ii. Selection and preparation of source material
- iii. Digitization and conversion
- iv. Cataloguing and metadata assignment
- v. Quality assessment
- vi. System administration and maintenance of digital library server and website.
- vii. System analysis/programming for digital library application
- viii. Promotion and provisions of services. Moreover, the rapid changes in the digital library technologies require constant re-training and re-positioning of staff for an effective practice in technological application.

Conclusion :- Digitization has opened up new audiences and services for libraries, and it needs to be integrated into the plans and policies of any institution to maximize its effectiveness. Digitization is a complex process with many crucial dependencies between different stages over time.

Reference:-

1. Council on Library and Information Resources. Available at <http://www.clir.org>
2. Journal of Librarianship and Information Science
3. <http://www.library.edu/preservation>
4. <http://www.digilib.org/collections>

EMERGING RESEARCH JOURNAL

A Peer Reviewed (Refereed/Juried) International Journal

SUBSCRIPTION FORM TEMPLATE

I wish to subscribe to Emerging Research Journal for [1] [2] [3] Year(s). A Bank D.D. Bearing No. _____ Dated _____ for Rs./\$ _____ drawn in favour Of "JABALPUR PUBLIC COLLEGE" payable at Jabalpur, towards subscription has been enclosed herewith.

Name: _____

Designation : _____ Qualification : _____

Subscription Year : 1 year [] 2 Years [] 3 Years []

Subscription Type : Individual [] Institutional []

Delivery Address: _____

Contact No. _____ E-mail : _____

SUBSCRIPTION RATES

DURATION	INDIVIDUAL	INSTITUTIONAL	ROW(USD)
ONE YEAR	Rs. 500	Rs. 600	\$ 50
TWO YEAR	Rs 900	Rs. 1100	\$ 75
THREE YEAR	Rs. 1200	Rs. 1500	\$ 100

Note:

1. Subscriptions are available for a whole volume (June & Dec.) only
2. No cancellations are permitted.
3. Claims for missing issues can be made only within 45 days of publication date.
4. All legal disputes subject to Jabalpur jurisdiction only.

Subscription Address

Subscription Manager
Emerging Research Journal
Jabalpur Public College
49 Karmeta Patan Road , Jabalpur
Madhaya Pradesh Pin-482002
jabalpurpubliccollegejbp@gmail.com
Cont: 0761-2688838,9425154312

Get it photocopied for more subscription



Since 1995



JABALPUR PUBLIC COLLEGE

Affiliated to R.D.V.V. Jabalpur

RUN BY SHIV NARAYAN FOUNDATION

Shape your career with us

Facilities & Highlights

- Conference Hall
- Well Equipped Lab
- Library
- Wi-Fi Campus
- Canteen
- Career Guidance
- Sports & Games
- Campus Selection.

- **D.EL.Ed.**
- **B.Ed.**
- **M.Ed.**
- **B.A. B.Ed.**
- **Proposed
B.Ed. M.Ed.**

For More information contact

49, Karmeta, Patan Road, Ahead of Radio Station
Near MPSRTC Depot, Jabalpur (m.p.)

Ph. : 0761-2688838/9425154312/9826826822/9713561012

E Mail : Jabalpurpubliccollegejbp@gmail.com

Website : Jpc.org.in

